

[सर्वोदय साहित्य माला : अष्टावन्तर्वाँ ग्रन्थ]

इंग्लैण्ड में महात्माजी

लेखक
महादेव देसाई

सम्पादना नाहियर मण्डल, दिल्ली

प्रकाशक : लक्ष्मण

प्रकाशक,
भार्तण्ड उपाध्याय, मंत्री,
सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली ।

संस्करण

जून, १९३२ : २०००

नवम्बर १९३८ : १०००

मूल्य

एक रुपया

मुद्रक,
हरनामदास गुप्त,
भारत प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली ।

दो शब्द

गांधी-इविन-समझौते के बाद, महात्मा गांधी, राष्ट्रीय-महासभा-
(कांग्रेस) द्वारा एकमात्र प्रतिनिधि निर्वाचित होकर, गोलमेज़-परिषद् में
सम्मिलित होने इंग्लैण्ड गये थे। वहाँ परिषद् में उन्होंने जो भाषणादि
दिये, वे 'राष्ट्र-वाणी' के नाम से पुस्तक-रूप में मण्डल से अलग प्रकाशित हो
चुके हैं। किन्तु इतने ही पर उनका कार्य समाप्त नहीं हो जाता। सच पूछा
जाय तो, यह तो एक प्रकार से उनका गौण कार्य था। यह परिषद् में
कोई विशेष आशा लेकर नहीं गये थे। उनका वास्तविक कार्य तो परि-
षद् से बाहर था। इसलिए परिषद् से बचा हुआ उनका सारा समय
लन्दन और उससे बाहर के आस पास के प्रमुख व्यक्तियों से भेंट करने
एवं समस्याओं में सम्मिलित होकर भारत के सम्बन्ध में पंती चलाने-पहमी
को दूर कर राष्ट्रीय महासभा के राय को निश्चय करने में ही व्यतीत होता
था। उनका यह कार्य परिषद् के बाद से बड़ी जीवन्मृतपूर्ण था।
भी महादेवभाई देसाई इस सद्यः विद्यमान प्रसिद्ध पुस्तक 'गोलमेज़' में
प्रकाशनाय भेजने लगे थे। इससे पूर्व जहाँ पर जहाँ का मत रजि-
स्ट्रेशन के तहत भारत में प्रकाशित करने पर गांधीजी का जो अग्रिम स्तरान
हूँ। उनका मनोरंजन विवरण भी यद्यपि समय पर इंग्लैण्ड में प्रकाशित
हूँ। इस पुस्तक में उनकी सद्यः स्थिति के विवरण नमूदायन
में समुचित सम्पादन की है। इससे तो हमें किसी अनुवाद का सम्मान

मुझे प्राप्त हुआ था । परिस्थितिवश मेरे माता-पिता मे आदर्शपूर्ण और मोहनबालजी भट्ट को भी इस सम्बन्ध में काफी काम करना पड़ा था । स्थानीय दो-एक मित्रों से भी इसमें मुझे सहयोग मिला है । अतः इस सबके लिए मैं उनका कृतज्ञ हूँ ।

अजमेर
ज्येष्ठ पूर्णिमा, १९८९ }

शंकरलाल वर्मा

इंग्लैण्ड में महात्माजी

यह एक प्रकार से बिलकुल जादू-सा ही हुआ, अन्यथा गाँधीजी के सचमुच जहाज़ पर सवार होने से पहले किसी को यह विश्वास न हुआ होगा कि वह बिलायत जा रहे हैं। अधगोरे पत्रों नेवाणी का संदेश के शिमला के संवाददाताओं ने सुख की साँत ली होगी कि 'शान्ति में विघ्न डालनेवाला', 'असुविधाजनक व्यक्ति', 'दुःख-दायी आदमी' खाना हो गया—और, प्रायः ऐसे ही भाव अफ़सरों के भी हुए होंगे। सतत जागरूकता ऐसी चीज़ है, जिसे कोई सत्ताधारी सहन नहीं कर सकता। लेकिन गाँधीजी के लिए तो यह सतत जागरूकता ही जीवन का मूल श्वात है। किसीको यह न समझ बैठना चाहिए कि चूँकि गाँधीजी कुछ सफ़्तारों के लिए ग़ैर हाज़िर रहेंगे, इसलिए इस जागरूकता अथवा सावधानी में शिथिलता आ जायगी। गत २७ अगस्त को यह-सचिव (होम सेक्रेटरी) को लिखा हुआ पत्र, जो कि दूसरे समझौते का भाग है, कॉम्रेल को सतत जागरूकता अथवा सावधानी के बचन और गाँधीजी के इन भावों के सार्वजनिक प्रकाश के बिना और कुछ नहीं है कि यदि यह जा रहे हैं, तो सरह और समित्त-दरम में जा रहे हैं।

ने आपको हिवकिचाने की इकरत नहीं (चटगाँव की बरबादी की खबर धीरे-धीरे आ रही है)। आपने हमें प्रसन्नतापूर्वक कष्ट-महन करना सिखाया है। आपने हमारे कोमल हृदय को फ़ौलाद-भा कठोर बना दिया है। ऐसी दशा में क्या चिन्ता, यदि आप खाली हाथ लौटें ? केवल आपका जाना ही काफ़ी है। जाइए, और मानव समुदाय को अपना प्रेम और भावुत्व का सन्देश सुनाइए। मानवजाति रोगों से कराह रही है और शान्ति के महम के लिए, जो कि वह जानती है, आप अपने साथ ले जायेंगे, अत्यन्त चिन्तातुर हैं।”

गाँधीजी ने एक मित्र को जहाज़ में सबसे नीचे दर्जे की पांच जगहें तय कर लेने के लिए तार दे दिया था। जहाज़ में सबसे नीचा दर्जा सेकेंड क्लास था, इसलिए हम दूसरे दर्जे की कोठरी में हमारा नामान रहे। लेकिन ज्यों ही गाँधीजी को अवसर मिला, उनकी ग़द-ग़ाबि हमारी कोठरी की चीज़ों की जाँच-पड़ताल करने लगी। उन्होंने कहा, भाग्य ने हम दूसरे दर्जे की कोठरी में हैं, किन्तु नान लो यदि हम निचले दर्जे के सुमाफ़िर होने, तो अपने साथ के इतने नामान की किस तरह व्यवस्था करते ? एक जवाब था, ‘कुछ ही घण्टों में हमें तैयार होना पड़ा था।’ दूसरा जवाब था, ‘हमने ये सब गूढ़केत उधार लिए हैं और घर पहुँचते ही यह सब लौटा देंगे।’ एक तीसरा जवाब यह था कि कई मित्रों ने अपनी फ़ाकल चीज़ों की भरमार करदी और उन्हें रखने का हमारे पास कोई जगह न था। एक जवाब यह भी था कि जानकारी मित्रों ने हमें कुछ सामान्य चीज़ों में लैग रहने की सलाह दी थी और इसलिए उन्होंने जो कुछ कहा उसे करने में मिला और कोई चारा न था।

इन जवाबों ने हमारे मामले को और भी खराब कर दिया । उन्हें इनमें विशेष बढ़ानेवाली मालूम हुई और वह उत्तेजित हो गये । देश के दूरिदृष्ट समुदाय के प्रतिनिधि के साथी अपने साथ ऐसे बहुमूल्य सूटकेस रखें, कोई बात नहीं, चाहे वे मेट में आये अथवा उबार लिये क्यों न हों, इसी खयाल से उन्हें बड़ा आघात पहुँचा; और इसीलिए हममें ने जो कोई भी उनके सामने आया, उसे उनकी कड़ी फटकार सुननी पड़ी—

“तैयारी के लिए समय के अभाव का बहाना करना कुछ अच्छा नहीं । किसी तैयारी की ज़रूरत न थी । उचित ही नहीं बल्कि यह अधिक अच्छा होता कि जो-कुछ भी चीज़ें आईं, सबके लिए तुम मिश्रों ने कह डेते कि हमें इन सबकी कुछ भी आवश्यकता नहीं है, और अपने लिए जय-शान्ति के भण्डार से कुछ गरम और सूती यान ले आते । लेकिन तुम तो जो कुछ आया सब लेते गए, मानो तुम्हें लन्दन में पाँच वर्ष रुकना हो ! मैंने तुमसे कह दिया था, कि हमें जिस किमी चीज़ की आवश्यकता होगी वहाँ मिल सकेगी और लौटने पर हम उसे गरीबों के लिए छोड़ने आँगे । तुमने ये सूटकेस वापस करने का वादा कर लिया है, इसने तुम्हारे अस्वभाव में कमी नहीं हो सकती । मैंने यह कमी खयाल नहीं किया था कि तुम ये साथ रख रहे हो; लेकिन तुम लोगों ने बिना किमी दिक्कत-बादल के इन चमड़े के दूधों को स्वीकार कर लिया, इसने अपनी गरीबी और अग्रिम की प्रतिष्ठा के सम्बन्ध में तुम्हारी क्या धारणा है, इसका मुझे खयाल हो आया । तुम कहते हो कि इनमें की कुछ चीज़ें पुगनी हैं और मित्र के पास कालवू पड़ी हुई थीं । इसने तुम या तो खुद अपने को धोखा दे रहे हो, या मुझे धोखे में डालना चाहते हो । यदि ये कालवू

होतीं, तो उन्होंने इन्हें फेंक दिया होता । उन्होंने ये तुम्हें कभी न दी होतीं, यदि तुमने उनसे यह न कहा होता कि हमें इनकी ज़रूरत है । और यह कहना कि तुमने जानकारों की सलाह के अनुसार यह सब कुछ किया, बेहूदगी है । अगर तुमने उनकी सलाह ली, तो तुम्हें उनके साथ ही रहना चाहिए था । यहाँ तुम मेरे साथ हो और इसलिए मेरी सलाह के अनुसार चलना चाहिए ।” इस तरह कई दिनों तक यह फटकार पड़ती रही । सौभाग्य से हम बहुत अच्छे प्रवासियों में थे, किन्तु यह फटकार किसीको भी खिन्न अथवा बीमार कर देने के लिए काफ़ी थी । इससे हमने यह अच्छा उपाय सोच निकाला कि हमें जिन चीज़ों की ज़रूरत है, और जिनकी ज़रूरत नहीं है, उनकी छँटनी कर डालें और अनावश्यक चीज़ों को अदन से वापस लौटा दें । और इसलिए यह हमारा पहला काम हो गया ।

इसीमें तीन दिन लग गये और चौथे दिन हमने अपनी सूची निरीक्षण के लिए पेश की । उन्होंने कहा, ‘अब मैं तुम्हारी सूची में देखल न दूँगा, यद्यपि मैं यह चाहूँगा कि लन्दन की गलियों में तुम्हें उसी तरह भ्रमता देखूँ, जिस तरह कि तुम लोग शिमले में घूमा करते हो । यदि तुम शिमले में एक धोती, एक कुर्ता और एक जोड़ी चप्पल पहन कर घूम सकते हो, तो मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि लन्दन में ऐसी कोई बात नहीं है, जो तुम्हारे इस तरह घूमने में रुकावट डाल सके । यदि मैं देखूँगा कि तुम पर्याप्त कपड़े नहीं पहने हुए हो, तो मैं स्वयं तुम्हें सावधान करूँगा और तुम्हारे लिए अधिक ऊनी कपड़े प्राप्त करूँगा । लेकिन तुम किसी ऐसे काल्पनिक भय के कारण कुछ भी न पहनो कि

साहब (भोपाल) की पार्टी में कोई काश्मीरी दुशाले खरीदना चाहते हों, तो मुझे बताओ। मित्रों ने मेरे लिए जो बहुत से शाल दिये हैं, मैं उनकी दूकान खोल सकूँगा। एक मित्र ने मुझे ७००) का जो बहुमूल्य शाल दिया है, वह इतना मुलायम और बारीक है कि एक अँगूठी के बीच में से निकल सकता है। कदाचित् उन्होंने यह खयाल किया होगा कि यह दिखाने के लिए कि करोड़ों भारतीयों का मैं कितना अच्छा प्रतिनिधित्व करता हूँ, मैं यह शाल ओढ़कर गोलमेज़-परिषद् में जाऊँगा ! अच्छा हो, यदि वेगम साहब इस बहुमूल्य शाल से मुझे मुक्त करें और इसके बदले शरीरों के उपयोग के लिए मुझे ७०००) रुपये दें। शरीरों के एकमात्र प्रतिनिधि के लिए यही सबसे उपयुक्त है।'

यह फटकार अनुपयुक्त नहीं थी, यह बात इसीसे निश्चित रूप से सिद्ध हो जायगी कि इसके परिणामस्वरूप हमें जो छँटनी करनी पड़ी, उससे हम कम-से-कम सात सूटकेन अथवा केबिन ट्रंक अदन से वापस लौटा कर उनसे छुट्टी पा गये।

समुद्र जुब है। हममें से अधिकांश गाँधी जी से, जिनसे बढ़कर 'राज-पूताना' जहाज़ पर शायद और कोई नाविक नहीं है, कोई गम्भीर बात या सहन करने के लिए तैयार नहीं है। तेकेण्ड क्लास की उत्तम नाविक सतह पर उन्होंने एक कोने में अपने लिए जगह चुन ली है, और वे अपने दिन का अधिकांश और सारी रात वहीं बिताते हैं। उन दिन बिड़लाजी ने उनसे कहा, 'भालूम होता है, हम लोगों से पिएड छुड़ाने के लिए आपने जानबूझ कर यह जगह चुनी है। हमारे लिए तो प्रार्थना के समय भी कुछ भिन्न भी यहाँ बैठना कठिन प्रतीत होता है।'

लेकिन हिन्दुस्तानी मुसाफ़िरों की काफ़ी संख्या ने अपनी समुद्री बीमारी से छुटकारा पाना शुरू कर दिया है, जिससे कि भोजन के कमरे अथवा पूरे भर जाते हैं, और २२ यात्री कल शाम की प्रार्थना में सम्मिलित हुए थे। गांधीजी ने अपने दैनिक कार्यक्रम में कोई परिवर्तन नहीं किया है। अपने नियमित समय पर वह सोते और उठते हैं और हमेशा की भांति ही काम करते हैं।

यहाँ मुझे यह कहना ही होगा कि न सिर्फ़ गांधीजी के प्रति, बल्कि उनके सब साथियों के साथ, जो कि खादी का कुर्ता, धोती और टोपी पहने हुए सारे जहाज़ में धमाचौकड़ी मचाये जहाज़ के कर्मचारी रहते हैं, जहाज़ के सब अधिकारियों का व्यवहार न केवल असाधारण बल्कि अत्यधिक शिष्टापूर्ण रहा है। पी० एण्ड थ्रो० जहाज़ी कम्पनी के खिलाफ़ हिन्दुस्तानी मुसाफ़िरों को रङ्गभेद और जातीय पक्षपात की जो अनेक शिकायतें आप सुनते हैं, वे किसी तरह इस यात्रा के समय इस जहाज़ से ग़ायब होगई दिखाई देती हैं।

: २ :

यम्बई से ठीक पश्चिम की तरफ़ के १,६६० मील दूर थका देनेवाले समुद्री-सफ़र के बाद, विश्राम का पहला बन्दरगाह अदन है। नगर

अदन ज्वालामुखी चट्टानों का समूह है—नगर का केन्द्र

भाग अभी तक 'फ़ेडर' (ज्वालामुखी का मुख) कह-

लाता है और यात्री को जहाज़ पर से ही मछलियों के बड़े-बड़े ढेर और शहर के चारों ओर की वृक्षहीन, कोयल-सी काली चट्टानें दिखाई देने लगती हैं। कहा जाता है कि सदियों से इसपर अनेक शासकों ने शासन किया, और अब भी कहा जाता है कि जिस समय सन् १८३६ में इसपर अधिकार किया गया वह एक मछली के शिकार का छोटा-सा गाँव था, जिसमें मुश्किल से ६०० प्राणी रहते थे। यदि विश्वस्त विवरण मालूम हो सके तो इसके क़ब्ज़ा किए जाने की कथा भी बड़ी मनोरंजक होगी और कदाचित् साम्राज्यवादी लुटेरों की उन्नीसवीं सदी की लूट में और वृद्धि करेगी। अवश्य ही अंग्रेज़ी स्कूल के विद्यार्थी को तो यही पढ़ाया जाता है कि लादेज का सुलतान, जो कि सालाना ख़िराज के तौर पर अदन छोड़ने के लिए तैयार हो गया था, अपने बापदे से फिर गया और एक अंग्रेज़ी जहाज़ पर हमला करके उसे

देना ही काफ़ी नहीं है; वरन् जहाँ महात्मा के प्रतिनिधि निमन्त्रित किये जायँ, वहाँ उसे सम्मान का स्थान देना चाहिए ।

“महात्मा की ओर से मैं आपको यह विश्वास दिलाता हूँ कि उसका उद्देश्य ऐसी ही स्वाधीनता प्राप्त कर लेना नहीं है, जिससे भारतवर्ष संसार के अन्य राष्ट्रों से अलग पड़ जाय; क्योंकि ऐसी विश्व-शान्ति और भारत के स्वाधीनता तो आत्मा की संसार के लिए खतरा बन सकती है । सत्य और अहिंसा के अपने ध्येय के कारण महात्मा सम्भवतः संसार के लिए खतरा हो भी नहीं सकती । मेरा यह विश्वास है कि मानवजाति का पाँचवाँ भाग—भारत—सत्य और अहिंसा द्वारा स्वतन्त्र होने पर, समस्त मनुष्य-जाति की सेवा की एक ज़बरदस्त शक्ति हो सकता है । इसके विरुद्ध आज का पराधीन भारत संसार के लिए एक खतरा है । वर्तमान भारत अस्तहाय है और इसे सदैव लूटते रहनेवाले दूसरे देशों की ईर्ष्या और लालच को इससे उत्तेजना मिलती रहती है । लेकिन जब भारत इस तरह लुटने से इनकार कर अपना काम स्वयं अपने हाथ में लेने में काफ़ी समर्थ होगा, और अहिंसा और सत्य के द्वारा अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करेगा, तब वह शान्ति की एक शक्ति होगा और अपने इस पीड़ित भूमण्डल पर शान्तिपूर्ण वातावरण पैदा करने में समर्थ होगा ।

“इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि इस समारोह के संगठन में अरब और अन्य लोगो ने हिन्दुस्तानियों का साथ दिया । शान्ति के सब उपायों को सन्देश सको को शान्ति को विरस्थापी बनाने के काम में सहयोग देना ही चाहिए । मुहम्मद और इस्लाम की जन्मभूमि, यह महादीप, हिन्दू मुस्लिम समस्या के हल करने में मदद कर

सकती है। मेरे लिए यह अस्वीकार करना लजा की बात है कि अपने घर में हम एक-दूसरे से अलग हैं। कायरता और भय से हम एक-दूसरे का गला काटने दौड़ते हैं। हिन्दू कायरता और भय के कारण मुसलमानों का अविश्वास करते हैं और मुसलमान भी वैसी ही कायरता और कल्पित भय से हिन्दुओं का अविश्वास करते हैं। इतिहास में गुरु से अखीर तक इस्लाम अपूर्व बहादुरी और शान्ति के लिए खड़ा है। इसलिए मुसलमानों के लिए यह गौरव की बात नहीं कि वे हिन्दुओं से भयभीत हों। इसी तरह हिन्दुओं के लिए भी यह बात गौरवपूर्ण नहीं है कि वे मुसलमानों से, चाहे उन्हें संसार-भर के मुसलमानों की सहायता क्यों न मिली हो, भयभीत हों। क्या हम इतने पतित हैं कि हम अपनी ही परछाई से डरें ? आपको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि पठान लोग हमारे साथ शान्तिपूर्वक रह रहे हैं। पिछले आन्दोलन में वे हमारे साथ कंधे-से-कंधा भिड़ाकर खड़े रहे और स्वतन्त्रता की वेदी पर अपने नौजवानों का उन्होंने खुशी-खुशी बलिदान किया। मैं आपसे, जो कि पैगम्बर की जन्मभूमि के निवासी हैं, चाहता हूँ कि भारत के हिन्दू-मुसलमानों में शान्ति कायम रखने में आप अपने हिस्से का सहयोग दें। मैं यह नहीं बता सकता कि आप यह किम तरह करें, लेकिन जहां इच्छा होती है वहाँ रास्ता निकल ही आता है। मैं अरब के अरबों से चाहता हूँ कि वे हमारी मदद के लिए आगे बढ़ें और ऐसी स्थिति पैदा करने में हमारी सहायता करें, जिसमें कि मुसलमान हिन्दुओं की और हिन्दू मुसलमानों की सहायता करना अपने लिये इज्जत और सम्मान की बात मानें।

“बाक्री के लिए मैं आपको अपने घरों में चरखा और करघा चलाने का देश भी देना चाहता हूँ। कई खलीफ़ाओं ने अपना जीवन अनुकरणीय दृष्टि से बिताया है, और इसलिए यदि आप भी अपना कपड़ा स्वयं बना सकें, तो इसमें इस्लाम के विरुद्ध कोई बात न होगी। इसके अलावा शराबखोरी का भी सवाल है, जो कि आपके लिए दुहरा पाप होना चाहिए। यहाँ पर शराब की एक भी बूँद नहीं होनी चाहिए थी। लेकिन क्योंकि यहाँ दूसरी जातियाँ भी हैं, मैं समझता हूँ, अरब लोग उन्हें इस बात के लिए तैयार करेंगे कि अदन में शराब की सर्वथा बन्दी होजाय। मैं आशा करता हूँ कि हमारा पारस्परिक सम्बन्ध दिन-ब-दिन बढ़ता रहेगा।”

आप चाहे समुद्र के बीचों-बीच हों, तो भी बाहरी दुनिया से आपका सम्बन्ध बराबर बना रह सकता है। आपको न केवल किनारे से ही बरन् एक जहाज़ से दूसरे जहाज़ तक से सन्देश-मार्ग में बधाइयाँ मिल सकते हैं। बम्बई से रवाना होने के तीन दिन में ही हमें मित्रों के बधाई के बहुसंख्यक बेतार के तार मिले। ‘सिटी आफ़ दड़ौदा’ तथा ‘फ़्रेकोविया’ नामक जहाज़ से भारतीय यात्रियों के बहुत से सन्देश मिले। इसी प्रकार फ़रांची और बम्बई से भी बहुत से सन्देश आये। किन्तु विशेषकर सुखद आश्चर्य तो बरवेरा के भारतीयों के तार से हुआ। एक क्षण के लिए हम इस चक्कर में पड़ गये कि बरवेरा कहीं दूसरे जहाज़ों की तरह कोई जहाज़ तो नहीं है, जिससे कि हमें बेतार के बधाई के सन्देश मिले हैं। किन्तु अन्त में पता चला कि बरवेरा ब्रिटिश सोमर्लैंड का मुख्य नगर है और १८८४ से संरक्षक स्थान है।

और अब क्योंकि हम स्वेज़ के निकट पहुँच रहे हैं, हमें काहिरा के भारतीयों और मिश्र-निवासियों से थोड़ी-थोड़ी देर में बधाई के सन्देश मिल रहे हैं। इनमें सबसे अधिक उल्लेखनीय श्रीमती जगलुलपाशा श्रीमती बेगम जगलुलपाशा का यह सन्देश था—“मिश्री सागर को पार करते हुए इस सुखद अवसर पर भव्य भारत के महान् नेता को मैं अपने हृदय के अन्तरतम से बधाई देती हूँ और भारतीय हितों की सफलता के लिए हृदय से कामना करती हूँ।” मिश्र के प्रमुख पत्र ‘अल बलग़’ का सन्देश भी देने योग्य है। वह यह —“काहिरा का ‘अल बलग़’ पत्र आपके रूप में भारत को बधाई देता है और परिपक्व में भारतीय हितों की सफलता चाहता है।”

जहाज़ पर के अपने मित्रों में सबसे पहले गिनती होनी चाहिए, अपने घर—इंग्लैंड—जानेवाले अंग्रेज़ यात्रियों के बालक-बालिकाओं की। बच्चों के न तो कोई लिंगभेद होता है, न रंगभेद। और हमारे जहाज़ पर सबने अधिक आस वान गाँधीजी का अक्सर बच्चों के कान खींचना, पीट टोकना और गाँधीजी के नारने अथवा मोहन के समय इन बालकों का उनकी केबिन—कोठरी—में अपने छोटे पिर डालना या झाँकना है। “अँगूर वा सज्जर ?” यह मामूली प्रश्न है, जो उनमें पृच्छा जाना है, और वे प्रसन्नता से अँगूर की तरतरी ल भागते हैं और तुरन्त खाली कण्ठ लौटा जाते हैं। मैंने इन्हें धूमने हुए चमों के चक्र को गिनटों तक बड़े आश्चर्य और विनोद के साथ देखते हुए देखा है। लेकिन इन मित्रों के सम्मुख में अधिक फर कभी कदम की आशा करना है।

गाँधीजी का चर्खा यहाँ सबके लिए एकसमान आकर्षण का विषय रहा है। यह आश्चर्य की बात है कि पुरुष, स्त्री सब जिन्दगी-भर कपड़े चर्खा पहनते हैं, किन्तु रुई, कताई और बुनाई के सम्बन्ध में वे कितना कम जानते हैं ! इसलिए जब गाँधीजी और मीरा-यहन डेक (नौकास्तल) पर चर्खा चलाने बैठते तो उनसे अनेक मनोरञ्जक प्रश्न पूछे जाते। लेकिन चर्खे के प्रति इस तरह जो दिलचस्पी पैदा हुई है, वह सरसरी नहीं है। उच्च-शिक्षा-प्राप्ति के लिए इंग्लैण्ड जाते हुए अनेक विद्यार्थियों ने मशीनों के इस युग में कताई की आर्थिक उपयोगिता और चर्खे के स्थान के सम्बन्ध में कई प्रश्न पूछे। लेकिन फिर भी यह देखकर कि पिछले कुछ वर्षों से चर्खा हमारे जीवन की एक विशेषता हो गई है, उनका अज्ञान उल्लेखनीय है।

प्रातःकाल की प्रार्थना का समय इन मित्रों के आकर्षण के योग्य नहीं था, क्योंकि वह बहुत जल्दी होती है। लेकिन शाम की प्रार्थना में प्रार्थना के सम्बन्ध में हिन्दू, मुसलमान, पारसी, सिख आदि प्रायः सब हिन्दुस्तानी (जिनकी संख्या ४२ से अधिक है) और इक्के-दुक्के अंग्रेज़ सम्मिलित होते हैं। इन मित्रों में से कुछ के प्रार्थना करने पर, प्रार्थना के बाद, गाँधीजी से पन्द्रह मिनट का वार्तालाप एक दैनिक कार्य बन गया है। प्रत्येक शाम को एक प्रश्न पूछा जाता है, और दूसरी शाम को गाँधीजी उसका उत्तर देते हैं। एक दिन एक मुसलमान युवक ने गाँधीजी से प्रार्थना के सम्बन्ध में सैद्धान्तिक विवेचन नहीं, बरन् प्रार्थना के फलस्वरूप उन्हें जो कुछ व्यक्तिगत अनुभव हुआ हो, वह बताने के लिए कहा। गाँधीजी ने इस प्रश्न को अत्यधिक पसन्द किया

और पूर्ण हृदय में प्रार्थना के माहौल में आने पाएंगे इस प्रयोग शुरू किया । उन्होंने कहा- "प्रार्थना मेरे जीवन की सज्जा रही है । इसके बिना मैं बहुत पलके ही परमात्मा से भगा जाता । मेरी 'प्रार्थना कक्षा' में आपको मान्यता देना कि अपने जीवन में मुझे सदा तक अविश्वसनीय सब तरह के कष्ट में कष्ट काफ़ी अनुभव हुए हैं । मैंने मुझ को एक निराशा में डाल दिया था; लेकिन अन्त में मेरे द्वारा अपने आपको बचा सका, और इसका कारण था प्रार्थना । अब मैं आपको बता देना चाहता हूँ कि जिस अर्थ में सत्य मेरे जीवन का एक भाग रहा है, यह तरह प्रार्थना नहीं रही है । इसका आरम्भ मीठा आश्चर्य के कारण हुआ, क्योंकि जब कभी मैंने अपने काकादरारे से कहा, 'कदाचित् इसके बिना मैं सुखी न हो सका । और जिनका आशय मेरे अन्तर में आश्वासन बढ़ा, उतनी ही अधिक प्रार्थना के बाद मेरा जीवन बढ़ने लगा । इसके बिना जीवन मुस्त और नीरस मान्यता देने लगा । अन्त में आकस्मिकता में मैं देशादर्यों की प्रार्थना में सम्मिलित हुआ था, लेकिन वह मुझ को आकाश में करने में असफल हुई । मैं प्रार्थना में उनका साथ न दे सका । उन्होंने ईश्वर की प्रार्थना की, किन्तु मैं ऐसा न कर सका, मैं बुरा तरह असफल हुआ । मैंने ईश्वर और प्रार्थना में अविश्वास करना शुरू कर दिया और आगे चलकर जीवन की एक ख़ास अवस्था के जन्म, मैंने जीवन में किसी बात को असम्भव नहीं समझा । लेकिन इस अवस्था में मैंने अनुभव किया कि जिस तरह शरीर के लिए भोजन अनिवार्य है, उसी तरह आत्मा के लिए प्रार्थना अनिवार्य है । वस्तुतः भोजन शरीर के लिए इतना आवश्यक नहीं है, जितनी प्रार्थना आत्मा के लिए; क्योंकि शरीर

को स्वस्थ रखने के लिए भूखे रहने या उपवास करने की अक्सर आवश्यकता हो जाती है, किन्तु 'प्रार्थना का उपवास' जैसी कोई वस्तु है ही नहीं। सम्भवतः आप प्रार्थना का अतिरेक नहीं पा सकते। संसार के सबसे बड़े शिक्षकों में के तीन महान् शिक्षक बुद्ध, ईसा और मुहम्मद अपना यह अकाद्य अनुभव छोड़ गये हैं कि उन्हें प्रार्थना के द्वारा प्रकाश मिला और उसके बिना जीवित रह सकना सम्भव नहीं। पात का उदाहरण लीजिए। करोड़ों हिन्दू, मुसलमान और ईसाई अपने जीवन का समाधान केवल प्रार्थना में पाते हैं। या तो आप उन्हें भूठा कहेंगे या आत्मबंचक। तब मैं कहूंगा, कि यदि वह 'भूठाई' है, जिसने मुझे जीवन का वह मुख्य आधार दिया है, जिसके बिना मैं एक क्षण को भी जीवित नहीं रह सकता था, तो मुझ तब संशोधक के लिए इस भूठाई में मोहकता है। राजनैतिक द्धिति में निराशा के स्पष्ट दर्शन होने पर भी मैंने कभी अपनी शान्ति नहीं खोई। वस्तुतः मुझे ऐसे आदमी मिले हैं, जो मेरी शान्ति ने ईर्ष्या करते हैं। मैं आपको बता देना चाहता हूँ कि मुझे यह शान्ति प्रार्थना ने ही मिलती है। मैं कोई विद्वान् व्यक्ति नहीं हूँ; किन्तु नम्रतापूर्वक कहना चाहता हूँ कि मैं प्रार्थना का प्राणी हूँ। प्रार्थना के रूप के सम्बन्ध में मैं उदात्त हूँ। इस सम्बन्ध में अरने लिए नियम निश्चित करने में प्रत्येक स्वतन्त्र है। किन्तु कुछ सुचिन्तित मार्ग हैं और प्राचीन शिक्षकों द्वारा अनुभूत मार्ग पर चलना अच्छा है। मैं अरना निर्भीक अनुभव बता चुका हूँ। प्रत्येक को प्रयत्न करना और यह अनुभव करना चाहिए कि दैनिक प्रार्थना के रूप में वह अरने जीवन में मिली नवीन शक्ति की दृष्टि कर रहा है।"

लिए आपसे कहता हूँ । इसके लिए, अपनी बुद्धि को चौंधिया देनेवाला और अपने को चञ्चल बना देनेवाला जो बहुत-सा साहित्य हमने पढ़ा है, उसे भुला देना होगा । ऐसी भ्रद्धा से आरम्भ कीजिए, जिसमें नम्रता का भी आभास है और यह स्वीकृति भी है कि हम कुछ नहीं जानते—इस संसार में हम अणु से भी छोटे हैं । हम अणु से भी छोटे हैं, यहाँ मैं इसलिए कहता हूँ कि अणु तो प्रकृति के नियमों की अधीनता में रहकर उनका पालन करता है, जब कि हम अपनी अज्ञानता के मद में प्रकृति के नियमों—कुदरत के कानून—का इनकार करते हैं—उनका भंग करते हैं । लेकिन जिनमें भ्रद्धा नहीं है, उन्हें समझा सकने जैसे कोई बौद्धिक दलील मेरे पास है ही नहीं ।

“एक बार ईश्वर का अस्तित्व स्वीकार कर लिए जाने पर प्रार्थना की आवश्यकता स्वीकार किये बिना कोई गति नहीं । हमें इतना बड़ा भारी दावा न करना चाहिए कि हमारा तो सारा जीवन ही प्रार्थनामय है । इसलिए किसी खास समय प्रार्थना के लिए बैठने की कोई खास जरूरत नहीं । जिन व्यक्तियों का सारा समय अनन्त के साथ एकाग्रता करने में बीता है, उन तक ने ऐसा दावा नहीं किया है । उनका जीवन सतत प्रार्थनामय होने पर भी, हमें कहना चाहिए कि, हमारे लिए वे एक निश्चित समय पर प्रार्थना करते और प्रतिदिन ईश्वर के प्रति अपनी वफ़ादारी प्रतिज्ञा को दुहराते हैं । अवश्य ही ईश्वर को ऐसी किन्ती प्रतिज्ञा आवश्यकता नहीं, लेकिन हमें तो मित्य इस प्रतिज्ञा को दुहराना चाहिए और मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि उस दशा में हम अपने जीवन के सब प्रकार के दुःखों से मुक्त हो जाएँगे ।”

स्थानों में आपकी सेवा में उपस्थित हो हमारी और से स्वागत करेंगे और शुभ कामनायें प्रकट करने का सौभाग्य प्राप्त करेंगे ।

(ह०) मुस्तफ़ा नहतपाशा,

वफ़द दल का प्रधान ।

श्रीमती ज़ुलपाशा का हृदयस्पर्शी सन्देश और 'अल बलग' की हार्दिक बधाई पहले दी जा चुकी है । श्री नहतपाशा का यह बेतार के तार का सन्देश इन दोनों से आगे बढ़ गया है ।

नहर में प्रवेश करने के कुछ घंटों बाद जहाज अनेक प्रकाशस्तम्भों के पास से गुजरता है, जिनसे मालूम होता है कि पुराने ज़माने में इस रास्ते से जहाज़रानी कितनी कठिन रही होगी; क्योंकि नहर का दक्षिणी हिस्सा चट्टानों और टीलों से भरा पड़ा है। आगे बढ़कर आपको मिनाई की पर्वतश्रेणी दिखाई देगी। कुछ मील दूरी से रेगिस्तानी ज़रखेज़ मोतों के खज़ूर के वृक्ष दिखाई देंगे। ये मोते मूसा के कुएँ कहलाते हैं, जहाँ कि मूसा और इसराइल के अनुयाइयों ने लाल-समुद्र पारकर फ़ेराओं की सेना में अपने छुटकारे का उत्सव मनाया था। स्वेज़-नहर के पूर्वीय किनारे का प्रत्येक खण्ड और पहाड़ी में हमारे देश के पवित्र पर्वतों और पहाड़ियों की तरह भूतकालीन कथाओं का खज़ाना छिपा हुआ है। इसके विपरीत लाल-सागर के पूर्वीय किनारे की पहाड़ियाँ मर्दे और बेडौल हैं और किसी तरह सुविधा-जनक नहीं हैं और इसलिए आश्चर्य होता है कि किस प्रकार इन प्रदेशों में संसार के तीन सुप्रसिद्ध—यहूदी, ईसाई और इस्लाम धर्म पैदा हुए। जब इस इन तीनों धर्मों के एक ही उद्गम-स्थान का ख़याल करते हैं और एक क्रम आगे बढ़कर यह सोचते हैं कि संसार के सब बड़े धर्म एशिया की पवित्र-भूमि में पैदा हुए हैं, तब

यह देखकर हम अपनेको लजित और अपमानित अनुभव किये बिना नहीं रह सकते कि किस प्रकार इन धर्मों के लुप्त अनुयायी, इन धर्मों के महान् उत्पादकों और उन्हें प्रकाश देनेवाले ईश्वर को यहाँतक भुला सकते हैं कि उन्हें इनमें सबको आपस में एक सूत्र में बांधने की कोई बात दिखाई नहीं देती, हरेक बात में उन्हें एक-दूसरे से, और इस तरह अवश्य ही ईश्वर से भी अलग रहने की सूझती है।

जबतक वात्कोडीगामा ने कैप आफ गुडहोप का पता लगाकर अधिक सुरक्षित और सस्ता राजमार्ग नहीं खोला, तबतक सारे मध्ययुग स्वेज़-नहर में लालसागर ही बड़ा व्यापारिक मार्ग था। किन्तु स्वेज़ नहर के जारी होने से लाल-सागर का, संसार के एक सबसे बड़े राजमार्ग होने का पद कायम रह गया है। स्वेज़ नहर फ्रान्स के एक महान् इंजीनियर फर्डिनेण्ड डिलेसेप्स की कृति है। भूमध्य-सागर के प्रवेश मार्ग के जल-बांध पर खड़ी हुई समुद्री हरे रंग की भव्य प्रस्तर मूर्ति प्रत्येक यात्री की दृष्टि को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। स्वेज़-नहर के बनने में दस वर्ष से अधिक लगे और स्वेज़ नहर कम्पनी को इसके लिए २,६७,२५०० पौंड से अधिक खर्च पड़ा, जिसका आधा फ्रांस ने दिया और आधा मिश्र के खदीव ने। किन्तु सन् १८६६ में नहर के जारी होते ही ब्रिटिश साम्राज्यवादियों की महत्वाकांक्षा की जीभ लपलपाने लगी। भारत के साथ समुद्री सम्बन्ध रखने के लिए इसकी महती आवश्यकता अनुभव हुई। निश्चय ही भारत पर अधिकार जमाये रखने के लिए स्वेज़ पर अंग्रेज़ी कब्ज़ा रहना लाज़मी था, लेकिन यह कब्ज़ा किस तरह प्राप्त किया जाय, फ़रासीसी इंजीनियर के परिश्रम के

फल का ब्रिटेन किस तरह उपयोग करे ? सरीस के हिस्से में सम्मन माँग कर दिया । उन दिनों प्रनिबन्दी साम्राज्यवादियों ने उनकी आँकणी में अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए, मत्तलनापूर्वक यह सूक्ति बना रखी थी कि वहाँ के देशी राजाओं को विदेशियों से मुक्त कर कर्ज लेने और इस प्रकार अपने आपको भारी कर्जदार बना लेने के लिए वे कुमनाते रहें । फ्रांस ने स्पूनिम पर इसी तरह कब्जा किया । मिश्र के स्वर्दीव को भी इसी तरह लगभग १० करोड़ पाँड मुख्यतः इंग्लैंड और फ्रांस ने कर्ज लेने के लिए कुमलाया गया, और इस कारण उनकी मात्र इतनी गिर गई कि स्वेज-नहर कम्पनी के अपने मय शेयर्स बेचने के बिना उसके पास कोई चारा न रहा । मन् १८७४ में इंग्लैंड में साम्राज्य-विरोधी नीति का अन्त हुआ और देमरादली ने स्वर्दीव के मय (१,७६,६०२) शेयर्स ३६,८०,००० पाँड में ग्रेटब्रिटेन के लिए खरीद लिये । इस परिवर्तन के सम्बन्ध में इतना लिखना काफी है । इस्माइलपाशा पर इस प्रकार ज़बरदस्ती लादे गये दिवालेपन का कारण क्या था, वह बताने के लिए हमें मिश्र पर कब्जा करने के गुन इतिहास में जाना पड़ेगा, जिसकी इस समय ज़रूरत नहीं है । यह कहना काफी होगा, कि १८२७ में इन शेयर्स की कीमत उनकी असली कीमत से नौगुनी थी और इस नहर के रास्ते होने वाली जहाज़रानी में लगभग ६० प्रतिशत जहाज़ अंग्रेज़ों के चलते हैं ।

पिछले पत्र में मैं श्रीमती जगलुलपाशा और वफ़द के अध्यक्ष श्री मुस्तफ़ा नहसपाशा के हार्दिक बधाई के मन्देशों का उल्लेख कर चुका हूँ । जहाज़ पर कई मिश्री अखबारों के प्रतिनिधि गांधीजी ने मिले और स्वेज तथा पोर्ट सईद दोनों जगह नहसपाशा के प्रतिनिधि ने उनसे

एंट की। काहिरा के भारतीय प्रतिनिधियों का, जिनमें अधिकांश सिन्धी थे, एक डेपुटेशन स्वेज़ और पोर्ट-सईद दोनों जगह स्वाधीन मिश्र गांधीजी से मिला, उन्हें एक अभिनन्दन-पत्र दिया और वापसी पर काहिरा ठहरने का आग्रह किया। पोर्ट-सईद पर मुझे यह बात निश्चित रूप से मालूम हुई कि यद्यपि इस भारतीय डेपुटेशन पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया; किन्तु अधिकारी मिश्रवासियों के डेपुटेशन को इजाजत देने के खिलाफ़ थे, और यह बड़ी 'नुरिकल' से सम्भव हुआ कि नहसपाशा के एकमात्र प्रतिनिधि को गांधीजी से मिलने की आज्ञा मिल सकी।

इस सम्बन्ध में यहाँ मिश्र की वर्तमान स्थिति पर संक्षेप में कुछ कहना असंगत न होगा। मैं उनकी स्थिति के अध्ययन का दावा नहीं करता; किन्तु अब तक अनेक मिश्रवासियों से बातचीत का मुझे लाभ मिल चुका है, और इससे वे जिस स्थिति में से गुज़र रहे हैं उसका काफ़ी अन्दाज़ लग गया है। निरंकुश एवं स्वेच्छाचारी शासकों के तरीक़े सब जगह एक-सै ही होते हैं, यहाँ तक कि यदि आपको कुछ ऊपरी बातें बताई जायें तो असली हालत का आप आसानी से अन्दाज़ लगा सकते हैं। मेरा खयाल है, कोई भी इस भ्रम में नहीं है कि मिश्र स्वतन्त्रता का आभास-भाव उपभोग कर रहा है। किन्तु मैं यह सुनने को तैयार न था।

मिश्री राजा और मिश्री प्रधान-मन्त्री होने पर भी मिश्र भारत से अधिक स्वतन्त्र नहीं है। जंगलुलपाशा ने 'वफ़रमिश्री'—मिश्र के प्रति निधियों की सस्था—नामक सस्था स्थापित की थी, जिसके अध्यक्ष इस

र पुलिस तैनात रहती है, पहली प्रुफ-कापी उसे बतानी पड़ती है, और यदि वह उसमें कुछ आपत्तिजनक बात समझती है तो उस अङ्क को रोकती है !” फिर पूछा—“विद्यार्थियों और साधारण जनता की क्या हालत है ?” जवाब मिला—“विद्यार्थी सब हमारे साथ हैं । श्रीमती जगलुल-पाशा—जो ‘मिश्र की माता’ कही जाती हैं—के नेतृत्व में लियों भी सजग हैं और माडरेट या लियरल पार्टी, जो पहले वफ्द का विरोध किया करती थी, अब उसका समर्थन कर रही हैं । उसके प्रेसीडेंट श्री मुहम्मद महमूद को एक उपद्रव के समय पीटा गया था, तब से वह वफ्द के कट्टर समर्थक हो गए हैं ।” अवश्य ही बधाई के तारों में एक तार उक्त श्री मुहम्मद महमूद और एक लियों की सच्चाद कमेटी की अध्यक्ष श्रीमती शेरिफा रियाज-पाशा का भी था । अखबारों पर कड़ी निगरानी होने पर भी मैं कह सकता हूँ कि कम-से-कम बारह मिश्री अखबारों ने, जिनमें तीन का तो दैनिक-प्रचार लगभग ४० से ५० हजार तक है, गांधीजी के सम्बन्ध में विशेष लेख लिखे, दो ने विशेषाङ्क निकाले और सब ने नहसपाशा, श्रीमती जगलुलपाशा तथा मुहम्मद महमूदपाशा आदि के सन्देश छापे ।

कोई आश्चर्य नहीं, यदि मिश्र हमारी ही तरह अंग्रेजी जुए से उकता गया हो और चाहता हो कि गांधीजी वापसी के समय मिश्र अवश्य आवें । प्रत्येक ने गांधीजी अथवा भारत से, उसके ‘छोटे भाई मिश्र’ के लिए सन्देश मांगा, और गांधीजी ने अपने प्रत्येक सन्देश में उस महान् देश के लिए सर्वोत्तम शुभ कामनायें प्रकट कीं, जिनकी मुख्य बात यह थी कि “यह कितना अच्छा होगा, यदि मिश्र अहिंसा के

सन्देश को अपनावे ?” स्वेज़ में एक अँग्रेज़ी पत्रकार के पूछने पर उन्होंने कहा—“मैं, पूर्व और पश्चिम के सङ्घ का हृदय से स्वागत करूँगा, बशर्ते कि उसका आधार पाशाविक शक्ति पर न हो।”

इन दिनों शाम की प्रार्थना के बाद की सब बातचीत अहिंसा के सम्बन्ध में होती थी। स्वेज़ से जहाज पर सवार हुए प्रेम का कानून कुछ मित्र के मित्र भी एक दिन इस बातचीत में भाग ले सके थे।

एक शाम को गाँधीजी ने कहा—“जान में या अनजान में हम अपने दैनिक-जीवन में एक-दूसरे के प्रति अहिंसक रहते हैं। सब सुसंगठित समाजों की रचना अहिंसा के आधार पर हुई है। मैंने देखा है कि जीवन विनाश के बीच रहता है, और इसलिए नाश से बढ़कर कोई एक नियम होना चाहिए। केवल उसी नियम के अन्तर्गत एक सुव्यवस्थित समाज समझा जा सकता है, और उसी में जीवन का आनन्द है। और यदि जीवन का यही नियम है, तो हमें अपने दैनिक जीवन में उसे बरतना चाहिए। जहाँ कहीं विसंगतता हो, जहाँ कहीं आपका विरोधी से मुकाबिला हो, उसे प्रेम से जीतिए। इस तरह मैंने अपने जीवन में इसे व्यवहृत किया है। इसका यह अर्थ नहीं कि मेरी सब कठिनाइयाँ हल हो गईं। मुझे जो कुछ भी मालूम हुआ वह यही है कि इस प्रेम के कानून से जितनी सफलता मिली है, विनाश के से उतनी कदापि नहीं मिली। भारत में हम इस नियम के प्रयोग का बड़े-से-बड़े प्रमाण में प्रदर्शन कर चुके हैं। मैं, इसलिए यह दावा नहीं करता कि अहिंसा तीस करोड़ भारतवासियों के हृदय में अवश्य ही घर कर गई है; किन्तु मैं

ना दाया अवश्य करता हूँ, कि अन्य किसी भी मन्देश की अपेक्षा, मैंने थोड़े से समय में, यह कहीं अधिक गहराई से प्रवेश कर गई है। यह सब समान रूप में अहिंसक नहीं रहे और अधिकांश के लिए अहिंसा के तौर पर रही है। इतने पर भी मैं चाहता हूँ कि आप देखें कि क्या अहिंसा की संरक्षक शक्त के अन्तर्गत देश ने असाधारण प्रगति नहीं की है।”

एक दूसरे प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा—“मानसिक अहिंसा की प्रगति तक पहुँचने के लिए काफ़ी कठिन प्रयत्न की आवश्यकता रहती है। एक सिपाही के जीवन की तरह, चाहे हम चाहें या न चाहें, हमारे जीवन में उसका अनुशासन की तरह पालन होना चाहिए। लेकिन मैं यह स्वीकार करता हूँ कि जबतक उसके साथ दिमाग या मस्तिष्क का हार्दिक सहयोग न होगा, उसका केवल ऊपरी आवरण ढोंग होगा, और स्वयं उस व्यक्ति और दूसरों के लिए हानिकारक होगा। पूर्णवस्था उसी दशा में प्राप्त होती है, जब कि मस्तिष्क, शरीर और वाणी इन तीनों का समुचित एवं समान रूप से मेल हो। किन्तु यह एक गहरे मानसिक संघर्ष का विषय है। उदाहरण के लिए यह बात नहीं है कि मुझे क्रोध न आता हो, लेकिन मैं क़रीब-क़रीब सब अवसरों पर अपने भावों को अपने वश में रखने में सफल हो जाता हूँ। नतीजा कुछ भी हो, मेरे हृदय में अहिंसा के नियम का मन से और निरन्तर पालन करने के लिए सदैव सजग संघर्ष होता रहता है। ऐसा संघर्ष मुझे उसके लिए काफ़ी शक्तिशाली बना देता है। अहिंसा शक्तिशाली अथवा ताक़तवर का अर्थ है। कमज़ोर आदमी के लिए वह आत्तानी से ढोंग बन जा सकता है। भय और प्रेम परस्पर विरोधी बातें हैं। प्रेम इस बात की परवाह नहीं करता कि बदले में उसे

सईद द्वीप से आगे बढ़ने पर जो प्रथम भूमिखण्ड नज़र आता है वह क्रीट-द्वीप का दक्षिणी पहाड़ी किनारा है। यही प्रचीनकाल में फिनो-शियन सभ्यता का केन्द्र था। यह द्वीप अत्यन्त उपजाऊ क्रीट का द्वीप है और यहाँ की आबोहवा बड़ी स्वात्म्यप्रद है। इटली के किनारे पहुँचने तक समुद्र कुछ अशान्त-सा बना रहा। हरे समुद्र पर से स्वेज़ नगर का दृश्य बड़ा सुन्दर प्रतीत होता है और नहर के पश्चिमी किनारे फ़रासीसी अफ़सरों के घरों की क़तार रात में बड़ी ही सुशान्नी मालूम पड़ती है; परन्तु मेसीना की खाड़ी की नैसर्गिक सुन्दरता का दृश्य-पटल इससे भी कहीं बढ़कर है। आगे बढ़ने पर समुद्र का रंग गहरा नीला हो जाने के कारण ऐसा मालूम होता था, मानों जहाज़ किसी शीत नील के ऊपर गम्भीर वेग से चल रहा हो। हमारे दक्षिण पार्श्व में प्रायः एक कोस के फ़ासले पर इटली की सुन्दर पर्वतमाला दिखलाई पड़ती है, जो अबतक के देखे हुए पहाड़ों की तरह सूखी और ठँडी नहीं है बल्कि साइप्रस और जैज़ून के वृक्षों से हरी-भरी है, जिनके बीच में थोड़े-थोड़े फ़ासले पर सुन्दर दस्तियां बसी हुई हैं। इस सुन्दर दृश्य में यूरोप की जो पहली बस्ती स्पष्टतया नज़र आती है वह रोजियो का प्राचीन नगर है। इसके ठीक सामने के किनारे पर मेसीना है, जो कदचित्त इससे भी अधिक सुन्दर है। जहाज़ के इस खाड़ी से बाहर निकलने पर यही भावना रहती है कि इन सुन्दर दृश्यों के बीच अधिक ठहरते तो अच्छा होता। अब आगे बढ़ने पर समुद्र और भी अधिक गम्भीर और कांच के समान साफ़ हो जाता है, यदांतक कि पूरुबिग से बढ़ते हुए सामने के जहाज़ की पर-छाई समुद्र में प्रतिबिम्बित होकर चित्र के समान सुन्दर प्रतीत होती है।

लन्दन की चिट्ठी

: १ :

हमारे जहाज़ के मार्सेल्स पहुँचने पर गाँधीजी का यूरोप की भूमि में सबसे पहले स्वागत करनेवालों में कुमारी मेडलीन रोलाँ का नाम मार्सेल्स में उल्लेखनीय है, जो कि फ्रान्स के उस महापुरुष की बहन हैं, जो अपने सत्य और अहिंसा के प्रेम के कारण स्वेच्छित निर्वासन भोग रहे हैं। श्री रोलाँ ने गाँधीजी के स्वागत के लिए स्वयं आने का जी-तोड़ प्रयत्न किया; किन्तु अपनी अस्वस्थता के कारण वह इसमें सफल न हुए और अपनी बहन के साथ प्रेमपूर्ण स्वागत का हार्दिक संदेश भेजकर ही सन्तोष कर लिया। कुमारी रोलाँ के साथ श्री प्रिवे और उनकी धर्मपत्नी भी थीं। ये दोनों स्वीज़रलैंड-निवासी हैं और श्री रोलाँ के साथ इनका घनिष्ठ सम्बन्ध है तथा सत्य और अहिंसा के प्रचार में इन्होंने भी ज़बरदस्त प्रयत्न किया है। राष्ट्रीय कार्यों में अहिंसा का प्रयोग एक नया आविष्कार है। जिस प्रकार एक वैज्ञानिक अपने नवीन आविष्कारों के संचालक-निर्गमों का संसार को दिग्दर्शन कराता है, उसी प्रकार श्री प्रिवे ने इस प्रेम के शिस्तान्त के नूतन प्रयोग का दिग्दर्शन कराया है। उन्होंने गाँधीजी को अपनी नवीन पुस्तक *Lechoe De Patriotismes* (देशभक्ति का संघर्ष) दिखाई। इसमें उन्होंने इस क्षेत्र के

समझाने का भार ले लिया है, जो मैं लगभग ३० वर्ष से अपने देश-वासियों को समझाने का प्रयत्न कर रहा हूँ। मैंने आपके देश की परम्पराओं और रूतों तथा विक्टर ह्यूगो के उपदेशों का कुछ अध्ययन किया है, और अपने लन्दन के कठिन मिशन पर कदम रखने से पूर्व आपके इस प्रेम-पूर्ण स्वागत से मुझे बड़ा प्रोत्साहन मिला है।”

उन्होंने उस युद्ध-प्रिय जाति के नवयुवकों के सामने अहिंसा के सन्देश का स्पष्टीकरण किया, और जब उन्हें समझाया कि “अहिंसा निर्यत्न का नहीं, वरन् अत्यन्त शक्तिशाली का अर्थ है; शक्ति का अर्थ केवल शारीरिक बल नहीं है; एक अहिंसक में शारीरिक बल का होना आवश्यक नहीं है, परन्तु दलवान् हृदय का होना अनिवार्य रूप से आवश्यक है,” तो उन्होंने इस पर बड़े उत्साह से हर्षध्वनि की। गाँधीजी ने उदाहरण देते हुए बतलाया कि किस प्रकार “एक बलिष्ठ जुलू एक पित्तौल लिए हुए अँग्रेज बालक के सामने कांपने लगता है; परन्तु इसके विपरीत भारतवर्ष की ललनाओं ने लाठी प्रहार और लाठियों की वर्षा को कितनी दृढ़ता के साथ सह्य। शत्रु के साथ युद्ध करते हुए मर जाना या मार डालना तो बहादुरी है ही, किन्तु अपने प्रतिद्वन्दी के प्रहारों को सहन करना और बदले में अँगुली तक न उठाना उससे कहीं ऊँचे दर्जे की बहादुरी है। यही चीज है, जिसके लिए भारत अपने-आपको तैयार कर रहा है।” अन्त में इसी प्रश्न के एक दूसरे पहलू पर चर्चा करते हुए उन्होंने कहा—“अहिंसा की यह लड़ाई दूसरे शब्दों में आत्म-शुद्धि की एक क्रिया कही जा सकती है—जिसका तात्पर्य यह है कि कोई राष्ट्र अपनी स्वतन्त्रता अपनी ही कमजोरी के कारण खोता है,

आशा करता हूँ कि आप वह सहानुभूति हमें दिये बिना न रहेंगे ।”

बहुत सी बातों में एक विचित्र प्रकार की समता होती है, फिर चाहे वे कहीं भी क्यों न हों। इसका एक उदाहरण है खुफिया पुलिस, दूसरा औद्योगिक नगर, और तीसरा प्रचार-कार्य करनेवाले अखबारनवीस

अखबारनवीस । मैं यह समझता था कि हिन्दुस्तान से खाना होते ही उस निकृष्ट प्रचार से हमारा पीछा छूट जायगा, जो स्वभावतः ही अधगोरे अखबारों में देखा जाता है। परन्तु यह आशङ्का व्यर्थ थी। ईंग्लैण्ड के कट्टर अनुदार अखबार दुनिया के किसी भी अखबार को इस विषय में मात कर सकते हैं। हमारे देश के अनुदार पत्र तो इस देश के इस कट्टर दल के अधूरे अनुगामी मात्र हैं। और इसका एक जीवित उदाहरण हमें ‘डेली मेल’ के प्रतिनिधि में मिला, जिसने ‘राजपूताना’ जहाज पर गाँधीजी से मुलाकात की। वह विद्यार्थियों के स्वागत के अवसर पर उपस्थित था और उसने अपने अखबार को ऐसे तार भेजे, जिनमें उसने गाँधीजी की बातों को बड़ी शरारत के साथ तोड़ा-भरोड़ा था, और जो कहीं-कहीं तो सरासर भूठे थे। हमें मार्सेल्स से बोलोन ले जानेवाली स्पेशल ट्रेन में गाँधीजी ने इस मित्र को खूब आड़े हाथों लिया। बहुत-सी बातों का तो उसके पास कुछ जवाब ही न था। उसकी रिपोर्ट के अनुसार गाँधीजी का स्वागत विद्रोही भारतीय विद्यार्थियों द्वारा हुआ था, जब कि वास्तव में उसका पूरा प्रबन्ध मार्सेल्स के ही विद्यार्थियों ने किया था। गाँधीजी के भाषण में से कोई संगत उद्धरण दिये बिना ही उसने लिखा था कि गाँधीजी ने ब्रिटिश शासन के खिलाफ पूर्ण का प्रचार किया। उनमें कहा गया कि वह अपने कथन

से चिढ़ने से बचाती है। यदि मुझमें इसका अभाव होता, तो मैं अवतक कभी का पागल हो गया होता। उदाहरण के लिए तुम्हारा यह लेख ही मुझे पागल बना देने के लिए काफी होता। मैं यह कह देना उचित समझता हूँ कि तुमने इस लेख में ऐसी बातों की भरमार की है, जो सत्य से बहुत दूर हैं और जिनके कारण मुझे तुमसे कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए। परन्तु मैं ऐसा नहीं करता, और जितनी बार तुम चाहोगे मैं तुम्हें सुलाकात देता रहूँगा।” इस फटकार से वह दबा जा रहा था। लेकिन उसमें पश्चात्ताप का कोई भाव नहीं था !

परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि पत्रकार-जगत् में सत्य की प्रतिष्ठा नहीं है और प्रमिद्ध-प्रमिद्ध पत्रकार तोड़-मरोड़ की इच्छा न रखते हुए भी सत्य को 'बेलवूटे' अधवा नमक-मिर्च लगाकर सजाना पसन्द करते हैं। उदाहरण के लिए अमेरिकन एसोशियेटेड प्रेस के सम्वाददाता श्री मिल्ल्स, जो बहुत दिनों से हमारे साथ हैं, और गांधीजी की प्रवृत्तियों से परिचित हैं, गांधीजी के जहाजी जीवन की घटनाओं पर नमक-मिर्च लगाये बिना न रह सके। उन्होंने प्रार्थना के दृश्य, चर्चों के आकर्षण तथा और भी बातों का वर्णन किया, किन्तु उन्हें यह जान पड़ा कि गांधीजी के साथ प्रति-दिन दूध 'मोनेबालो' एक बिल्ले' का जिफ़ किये बिना सब वर्णन फीका रह जायगा। इस प्रकार भी स्कोकोम्ब ने भी, जिन्होंने गांधीजी ने अपनी सम्बद्ध जेल का सुलाकात का रोमाञ्चकारी वर्णन प्रकाशित कर नाम पैदा कर लिया था, 'इवनिंग स्टैण्डर्ड' में गांधीजी को उदारता की प्रशंसा करने हुए यह अनुभव किया कि 'बिना' किसी स्पष्ट उदाहरण के विवरण अधूरा रहेगा। और इनके। उन्होंने अपनी कल्पना दीलाई और प्रिस

इंग्लैंड में महात्माजी]

की पुष्टि में कोई एक भी तिकरा या वाचन न बनाने । अपने वक्ता वह बराबर यही लचर दलील देता रहा, "मुझे इस बात का आश्चर्य है कि आप अपने भाषण में राजनीति से आगे ।" गांधीजी ने उससे कहा "तुमको यह समझ रखना चाहिए कि मैं अपने जीवन की महत्त्वमय से राजनीति को केवल इस कारण प्रयत्न नहीं कर सकता कि मेरी नीति गान्धी नहीं है, यह अहिंसा और सत्य के साथ अविच्छिन्न-रूँ बँधी हुई है । जैसा कि मैंने कई बार कहा है, मैं इस बात को पकड़ूँगा कि भारतवर्ष नष्ट हो जाय, बजाय इसके कि यह सत्य का करके स्वतन्त्रता प्राप्त करे ।" और भी बहुत से भेदे आक्षेप उसने किये, जिनका वह कोई प्रमाण न दे सका । बेचारे को वह नहीं मालूम कि उससे इस प्रकार जवाब तलब किया जायगा । गांधीजी ने हँसते हुए कहा,—“मिस्टर... आप सत्य के दायरे के बाहर ही चक्कर लगा रहे हैं ।” गांधीजी जब मभा-स्थल पर जा गये थे, तब ही देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ था कि मार्सेल्स की गलियों तक में और भीड़ लगी हुई थी, परन्तु 'डिलीमिल' वाले हमारे मित्र ने लिखा था, “ऐसा हलका स्वागत देखकर गांधीजी को बड़ी निराशा हुई ।” गांधीजी ने उससे पूछा—“तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि मैं निराश हुआ, और एक अंग्रेज़ कर्नल ने जो मुझे एक स्त्री की जाकट दी उसने मैं चिढ़ा, जब कि मैंने कहा था कि इसमें मेरा मनोरंजन हुआ ।” इसका वह कोई उत्तर न दे सका, और कहने लगा कि मैंने तो आपके उस मनोरंजन का अर्थ चिढ़ाना ही लगाया ! इस पर गांधीजी ने कहा—“अच्छा, अब मैं तुम्हें बतलाए देता हूँ कि मुझमें भी परिहास की प्रवृत्ति है, जो मुझे ऐसी बातों

से चिट्ठे से बचाती है । यदि मुझमें इसका अभाव होता, तो मैं अबतक कभी का पागल हो गया होता । उदाहरण के लिए तुम्हारा यह लेख ही मुझे पागल बना देने के लिए काफी होता । मैं यह कह देना उचित समझता हूँ कि तुमने इस लेख में ऐसी बातों की भरमार की है, जो सत्य से बहुत दूर हैं और जिनके कारण मुझे तुमसे कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए । परन्तु मैं ऐसा नहीं करता, और जितनी बार तुम चाहोगे मैं तुम्हें मुलाकात देता रहूँगा ।” इस फटकार से वह दबा जा रहा था । लेकिन उसमें पश्चात्ताप का कोई भाव नहीं था !

परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि पत्रकार-जगत् में सत्य की प्रतिष्ठा नहीं है और प्रसिद्ध-प्रसिद्ध पत्रकार तोड़-मरोड़ की इच्छा न रखते हुए भी सत्य को ‘बेलवूटे’ अथवा नमक-मिर्च लगाकर सजाना पसन्द करते हैं । उदाहरण के लिए अमेरिकन एसोशियेटेड प्रेस के सम्वाददाता श्री मिल्स, जो बहुत दिनों से हमारे साथ हैं और गांधीजी की प्रवृत्तियों से परिचित हैं, गांधीजी के जहाज़ी जीवन की घटनाओं पर नमक-मिर्च लगाये बिना न रह सके । उन्होंने प्रार्थना के दृश्य, चर्खे के आकर्षण तथा और भी बातों का वर्णन किया, किन्तु उन्हें यह जान पड़ा कि गांधीजी के साथ प्रति-दिन दूध पीनेवाली एक बिल्ली का ज़िक्र किये बिना सब वर्णन फीका रह जायगा ! इसी प्रकार श्री स्लोकोम्ब ने भी, जिन्होंने गांधीजी से अपनी यरवदा-जेल की मुलाकात का रोमाञ्चकारी वर्णन प्रकाशित कर नाम पैदा कर लिया था, ‘ईवनिंग स्टैण्डर्ड’ में गांधीजी की उदारता की प्रशंसा करते हुए यह अनुभव किया कि बिना किसी स्पष्ट उदाहरण के विवरण अधूरा रहेगा । और इसलिए उन्होंने अपनी कल्पना दौड़ाई और प्रिंस

चिट्ठे से बचाती है। यदि मुझमें इसका अभान होता, तो मैं शायदकभी का पागल होगया होता। उदाहरण के लिए तुम्हारा यह लेख ही मुझे पागल बना देने के लिए काफी होता। मैं यह कह देना अनित्य समझता हूँ कि तुमने इस लेख में ऐसी बातों की भरमार की है, जो सत्य से बहुत दूर हैं और जिनके कारण मुझे तुमसे कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए। परन्तु मैं ऐसा नहीं करता, और जितनी बार तुम चाहोगे मैं उन्हें मुलाकात देता रहूँगा।” इस पत्रकार से वह दवा जा रहा था। लेकिन उसमें पश्चात्ताप का कोई भाव नहीं था!

परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि पत्रकार-जगत् में सत्य की प्रतिष्ठा नहीं है और प्रतिद्वन्द्व-प्रसिद्ध पत्रकार तोड़-मरोड़ की इच्छा न रखते हुए भी सत्य को ‘बेलबूटे’ अथवा नमक-मिर्च लगाकर सजाना पसन्द करते हैं। उदाहरण के लिए अमेरिकन एंथ्रोपियेटेड प्रेस के सम्पादक श्री मिल्ल्स, जो बहुत दिनों से हमारे साथ हैं, और गांधीजी की प्रवृत्तियों से परिचित हैं, गांधीजी के जहाज़ी जीवन की घटनाओं पर नमक-मिर्च लगाये दिना न रह सके। उन्होंने प्रार्थना के दृश्य, चर्खे के आकर्षण तथा और भी बातों का वर्णन किया, किन्तु उन्हें यह जान पड़ा कि गांधीजी के साथ प्रतिदिन दूध पीनेवाली एक बिल्ली का झिक्र किये दिना सब वर्णन फीका रह जायगा! इसी प्रकार श्री स्लोकोम्य ने भी, जिन्होंने गांधीजी से अपनी यरवदा-जेल की मुलाकात का रोमाञ्चकारी वर्णन प्रकाशित कर नाम पैदा कर लिया था, ‘ईवनिंग स्टैण्डर्ड’ में गांधीजी की उदारता की प्रशंसा करते हुए यह अनुभव किया कि दिना किसी स्पष्ट उदाहरण के विवरण अधूरा रहेगा। और इसलिए उन्होंने अपनी कल्पना दौड़ाई और प्रिंस

की पुष्टि में कोई एक भी फिकरा या वाक्य बतलाये । अपने बचाव में वह बराबर यही लचर दलील देता रहा, “मुझे इस बात का आश्चर्य हुआ कि आप अपने भाषण में राजनीति ले आये ।” गांधीजी ने उससे कहा, “तुमको यह समझ रखना चाहिए कि मैं अपने जीवन की गहनतम बातों से राजनीति को केवल इस कारण पृथक् नहीं कर सकता कि मेरी राजनीति गन्दी नहीं है, वह अहिंसा और सत्य के साथ अविच्छिन्न-रूप से बँधी हुई है । जैसा कि मैंने कई बार कहा है, मैं इस बात को पसन्द करूँगा कि भारतवर्ष नष्ट हो जाय, बजाय इसके कि वह सत्य का त्याग करके स्वतन्त्रता प्राप्त करे ।” और भी बहुत से भद्दे आक्षेप उसने किये थे, जिनका वह कोई प्रमाण न दे सका । बेचारे को यह नहीं मालूम था कि उससे इस प्रकार जवाब तलाब किया जायगा । गांधीजी ने चुटकी लेते हुए कहा,—“मिस्टर..., आप सत्य के दायरे के बाहर-ही-बाहर चक्कर लगा रहे हैं ।” गांधीजी जब सभा-स्थल पर जा रहे थे, तब हमें यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ था कि मार्सेल्स की गलियों तक में दोनों ओर भीड़ लगी हुई थी, परन्तु ‘डेलीमेल’ वाले हमारे मित्र ने लिखा था, “ऐसा हलका स्वागत देखकर गांधीजी को बड़ी निराशा हुई ।” गांधीजी ने उससे पूछा—“तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि मैं निराश हुआ, और एक ऑग्रेज़ कर्नल ने जो मुझे एक स्त्री की ज़ाकट दी उसमें मैं चिढ़ा, जब कि मैंने कहा था कि इसमें मेरा मनोरंजन हुआ ?” इसका वह कोई उत्तर न दे सका, और कहने लगा कि मैंने तो आपके उस मनोरंजन का अर्थ चिढ़ाना ही लगाया ! इस पर गांधीजी ने कहा—“अच्छा, अब मैं तुम्हें बतलाए देता हूँ कि मुझमें भी परिहाम की प्रवृत्ति है, जो मुझे ऐसी बातों

से चिढ़ने से बचाती है । यदि मुझमें इसका अभाव होता, तो मैं अवतक कभी का पागल होगया होता । उदाहरण के लिए तुम्हारा यह लेख ही मुझे पागल बना देने के लिए काफी होता । मैं यह कह देना उचित समझता हूँ कि तुमने इस लेख में ऐसी बातों की भरमार की है, जो सत्य से बहुत दूर हैं और जिनके कारण मुझे तुमसे कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए । परन्तु मैं ऐसा नहीं करता, और जितनी बार तुम चाहोगे मैं तुम्हें मुलाकात देता रहूँगा ।" इस फटकार से वह दबा जा रहा था । लेकिन उसमें पश्चात्ताप का कोई भाव नहीं था !

परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि पत्रकार-जगत् में सत्य की प्रतिष्ठा नहीं है और प्रतिष्ठ-प्रतिष्ठ पत्रकार तोड़-भरोड़ की इच्छा न रखते हुए भी सत्य को 'बेलबूटे' अथवा नमक-मिर्च लगाकर सजाना पसन्द करते हैं । उदाहरण के लिए अमेरिकन एंथ्रोपियेट्रेड प्रेस के सम्पादक श्री मिल्ट, जो बहुत दिनों से हमारे साथ हैं और गांधीजी की प्रवृत्तियों से परिचित हैं, गांधीजी के जहाजी जीवन के घटनाओं पर नमक-मिर्च लगाये बिना न रह सके । उन्होंने प्रार्थना के दृश्य, जखों के आकर्षण तथा और भी बातों का वर्णन किया, 'कन्व' उनके यह जान रहा कि गांधीजी के साथ प्रति-दिन दूध पीनेवाला एक 'बेला' का 'जुस' किये 'बना' सब वर्णन पीका रह जायगा । इस प्रकार भी 'मोरोवर्ट' के लो, 'जिन्होने' गांधीजी से अपनी दसवदा जेल का 'सत्याग्रह' का 'समाप्त' वर्णन प्रकाशन कर नाम पैदा कर 'लगा' था, 'रिडिंग' मोरोवर्ट' में 'गांधीजी' का 'उदाहरण' की प्रशंसा करने का यह अनुभव 'कर' कि 'बना' 'कभी' स्पष्ट उदाहरण के विवरण 'आपूरा' रहेगा । और हम का 'उन्होने' अपनी 'कलम' 'दौड़ाई' और 'प्रति

की पुष्टि में कोई एक भी फिक्ररा या वाक्य बतलावे। अपने बचाव में वह बराबर यही लचर दलील देता रहा, “मुझे इस बात का आश्चर्य हुआ कि आप अपने भाषण में राजनीति ले आये।” गांधीजी ने उससे कहा, “तुमको यह समझ रखना चाहिए कि मैं अपने जीवन की गहनतम बातों से राजनीति को केवल इस कारण पृथक् नहीं कर सकता कि मेरी राजनीति गान्धी नहीं है, वह अहिंसा और सत्य के साथ अविच्छिन्न-रूप से बँधी हुई है। जैसा कि मैंने कई बार कहा है, मैं इस बात को पसन्द करूँगा कि भारतवर्ष नष्ट हो जाय, बजाय इसके कि वह सत्य का त्याग करके स्वतन्त्रता प्राप्त करे।” और भी बहुत से भद्दे आक्षेप उमने किये थे, जिनका वह कोई प्रमाण न दे सका। बेचारे को यह नहीं मालूम था कि उममें इस प्रकार जवाब तलब किया जायगा। गांधीजी ने चुटकी लेते हुए कहा,—“मिस्टर... आप सत्य के दायरे के बाहर ही-बाहर चकर लगा रहे हैं।” गांधीजी जब सभा स्थल पर जा रहे थे, तब हमें यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ था कि मार्गेल्लस की गलियों तक में दोनों आम मोड़ लगी हुई थी, परन्तु ‘इलीमन्ट’ वाले हमारे मित्र ने लिखा था, “जैसा हमका स्वागत देखकर गांधीजी का बड़ी निराशा हुई।” गांधीजी ने उससे पूछा—“क्यों ऐसा मालूम हुआ कि मैं निराश हुआ, और एक व्यक्ति कर्नल ने मेरे एक पत्र को जाकट दी उसमें मैं लिखा, जब कि मैंने कहा था कि इसमें मेरा मनोरंजन हुआ।” इसका वह कोई उत्तर न दे सका, और कहने लगा कि मैं तो आपका इस मनोरंजन का अर्थ निरूपण ही करता था। इस पर गांधीजी ने कहा—“अच्छा अब मैं इसे बतलाकर देता हूँ।” दुर्भाग्य की परदाय की प्रशान्त है। डा. बुक. पगो नामी

से चिट्ठे से बचाती है। यदि मुझमें इसका अभाव होता, तो मैं अवतक कभी का पागल होगया होता। उदाहरण के लिए तुम्हारा यह लेख ही मुझे पागल बना देने के लिए काफी होता। मैं यह कह देना उचित समझता हूँ कि तुमने इस लेख में ऐसी बातों की भरमार की है, जो सत्य से बहुत दूर हैं और जिनके कारण मुझे तुमसे कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए। परन्तु मैं ऐसा नहीं करता, और जितनी बार तुम चाहोगे मैं तुम्हें मुलाकात देता रहूँगा।” इस फटकार से वह दबा जा रहा था। लेकिन उसमें पश्चात्ताप का कोई भाव नहीं था।

परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि पत्रकार-जगत् में सत्य की प्रतिष्ठा नहीं है और प्रतिद्ध-प्रसिद्ध पत्रकार तोड़-भरोड़ की इच्छा न रखते हुए भी सत्य को ‘बिलवूटे’ अथवा नमक-मिर्च लगाकर सजाना पसन्द करते हैं। उदाहरण के लिए अमेरिकन एन्थोशिपेटेड प्रेस के सम्वाददाता श्री मिल्ल, जो बहुत दिनों से हमारे साथ हैं, और गांधीजी की प्रवृत्तियों से परिचित हैं, गांधीजी के जहाज़ी जीवन की घटनाओं पर नमक-मिर्च लगाये बिना न रह सके। उन्होंने प्रार्थना के दृश्य, चर्खे के आकर्षण तथा और भी बातों का वर्णन किया, किन्तु उन्हें यह जान पड़ा कि गांधीजी के साथ प्रतिदिन दूध पीनेवाली एक बिल्ली का झिझकिये बिना सब वर्णन फीका रह जायगा। इसी प्रकार श्री स्लोकोम ने भी, जिन्होंने गांधीजी से अपनी गरखदा-जेल की मुलाकात का रोमाञ्चकारी वर्णन प्रकाशित कर नाम पैदा कर लिया था, ‘ईवनिंग स्टैण्डर्ट’ में गांधीजी की उदारता की प्रशंसा करते हुए यह अनुभव किया कि बिना किसी स्पष्ट उदाहरण के विवरण अधूरा रहेगा। और इसलिए उन्होंने अपनी कल्पना दौड़ाई और प्रिंस

आफ़ वेल्ल (युवराज) के भारतागमन के समय गाँधीजी को उनके जग्गों में लोटने हुए बताया तो दिया ! गाँधीजी ने उनसे कहा, - "भाई स्लो-कोम्ब, मैं तो यह आशा करता था कि आप तो गरी-गरी अन्धरी लड़ जानते होंगे । किन्तु जो विवरण लिखा वह तो आपकी कल्पनाशक्ति पर भी लाञ्छन लगाता है । मैं भाग्यवर्ष के गरीब-से-गरीब भंगी और अश्रुन के सामने न केवल घुटने टेकना ही पसन्द करूँगा, वरन् उसकी चरण-रज भी ले लूँगा, क्योंकि उन्हें सदियों से पददलित करने में मेरा भी भाग रहा है । परन्तु मैं प्रिंस ऑफ़ वेल्ल तो दूर रहा, बादशाह तक के चरखों में न गिरूँगा-सिर्फ़ इसीलिए कि वह एक महान उद्दण्ड सत्ता का प्रतिनिधि है । एक हाथी भले ही मुझे कुचल दे, परन्तु उसके सामने फिर न झुकाऊँगा; किन्तु मैं अज्ञान में चाँटी पर पैर रख देने के कारण उसको प्रणाम कर लूँगा ।" डी वेल्लरा के अभी हाल ही में जारी किये हुए अखबार 'आयरिश प्रेस' को धन्य है कि उसने अपना 'मोटो' समाचारों में 'सच्चाई' रखा है और अपने पहले ही अङ्क में इन बात की घोषणा करती है कि "हम कभी जानबूझकर इस पत्र को अपने मित्रों को पथ भ्रष्ट करने और अपने विरोधियों के विरुद्ध शलतफ़ुडमी फैलाने के काम में नहीं लावेंगे ।" इस मोटो पर आचरण करनेवाले समाचार पत्र वास्तव में बहुत कम हैं ।

परन्तु किसी देश के मनुष्यों को वहाँ के अखबारों में ही जँचना ठीक न होगा, यद्यपि जिस देश में अखबारों का प्रचार लाम्बों की मग्या में है वहाँ यह सहज ही विचार किया जा सकता है कि वे कितनी अपार हानि कर सकते हैं । 'फ़्रेण्ड्स हाउस' का सार्वजनिक स्वागत बड़े सुचारु-रूप में संगठित किया गया था । उस

मेलन में, श्री लार्नेस् हाउसमैन—जिनने अच्छा सभापति मिलना कठिन—के शब्दों में, “राष्ट्र के महान् अतिथि” के स्वागत के लिए सार्वजनिक जीवन की प्रत्येक शाखा के प्रतिनिधि मौजूद थे। श्री हाउसमैन तुरन्त ही ‘कृतज्ञतापूर्ण स्वागत’ से बहुत गहरी जानेवाली चीज़ का सन्वादन दिलाया—अर्थात् भारतवर्ष के प्रति बढ़ता हुआ सन्वादन, ऐसा सन्वादन कि जिसपर परिष्कृत के नतीजे का कुछ प्रभाव नहीं पड़ सकता, तथा जो सदा अपरिवर्तनशील तथा कभी कम न होने वाला है। जब उन्होंने गाँधीजी को ऐसी बात का ज़रिया बतलाया जो साधारणतया सम्झी नहीं जाती है—अर्थात् राजनीति और धर्म का एकीकरण, तो उन्होंने बिलकुल ठीक बात कह दी। श्री हाउसमैन ने कहा, “गिरजों में हम सब पापी हैं, परन्तु राजनीति में दूसरे सब पापी हैं। हमारे दैनिक जीवन का सच्चा वर्णन यही है, तथा गाँधीजी हमारे यहाँ हम लोगों से यह अनुरोध करने आये हैं कि हम अपने हृदयों को टटोले और इसकी घोषणा कर दें कि हमारा धर्म क्या है।”

परन्तु खानगी स्वागतों में शायद और भी अधिक हार्दिकता थी। उदाहरणार्थ, हमारी मेज़बान मिस् ब्यूरिपल लेस्टर के ‘बो’ के किंग्सली-हाल में अपने साथ गाँधीजी को ठहरने पर जोर देने से किंग्सली-हाल अधिक प्रेमपूर्ण बात और क्या हो सकती है। किंग्सली-हाल का इतिहास प्रत्येक को जानना चाहिए ? किन्तु प्रकार एक आहत-हृदय के प्रश्नों के उत्तर में मिस् लेस्टर ने बो-स्ट्रीट में—कोलाहलपूर्ण शराबखानों तथा कन्दूखी, कगाली और पाप के आगार—गन्दे और हीन निवास गृहों के बीच में रहने का निश्चय किया, किन्तु प्रकार उन्होंने



करना कठिन नहीं होगा कि यह उन पर कितनी ज़रूरतस्ती होगी। मुहल्ले के रहनेवाले सैकड़ों स्त्री-पुरुष और बालक गाँधीजी के दर्शन और सम्मान-प्रदर्शन के लिए उस स्थान को घेर लेते हैं। जब हम बाहर जाते हैं तो बालकगण प्रसन्नतापूर्वक हमारे पीछे हो लेते हैं—इसलिए नहीं कि हमको तङ्ग करें; बल्कि मित्रता करने के लिए। देवीदास से बहुधा यह प्रश्न पूछा जाता है—“भला तुम्हारे पिता इंग्लैंड के बादशाह से क्या मिलेंगे?” दूसरा सवाल यह होता है, “क्या तुम्हारे देश के बच्चे बिलकुल हमारी तरह के हैं?” एक लड़की अपने पड़ोसी से कहती है, “ये लोग अपने कपड़ों में बड़े अजीब मालूम होते हैं।” पड़ोसी बड़ी चालाकी से उत्तर देता है, “हां, जिस प्रकार हम उनको अजीब मालूम होते हैं।” एक छोकरे का भोला-भाला सवाल होता है, “तुम्हारे पिताजी मोटर में जाते हैं, क्या वह तुम्हें मोटर नहीं देते?” दूसरा शरास्ती दूर से चिल्लाता है, “बतलाइए तो, आपकी पतलून कहाँ है?”

परन्तु इन सबकी सद्भावना में कोई सन्देह नहीं है। विरोधी अखबारों ने भी, अपनी इच्छा के विरुद्ध, मेहमानी की बहुत-सी तसवीरें

छाप-छापकर उनका खूब विज्ञापन कर दिया है,

सद्भावना जिसके कारण गलियों का मोटर-ड्राइवर, सड़क पर का मज़दूर, फुट-पाथ पर बैठा हुआ फूल बेचनेवाला तथा दूकान में गोश्त बेचनेवाला लन्दन में अपार भीड़ के कारण गाँधीजी की मोटर के रुकते ही उनको फौरन पहचान लेता है और नज़दीक आकर या तो सम्मानपूर्वक टोर हिलाने लगता है या प्रेमपूर्वक मुस्कराने लगता है।

आशा है कि आपकी उपस्थिति में परिपक्व का कार्य सुविधापूर्ण होगा और आपको इस देश की कड़ी ठंड से किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा।” लंकाशायर से सैंकड़ों पत्र आये हैं, उनमें से एक पत्र में लिखा है, “लंकाशायर के एक मज़दूर की हैसियत से क्या मैं यह प्रकट कर दूँ कि हालाँकि भारतीय महासभा के नेताओं के कार्य से हमको धक्का पहुँचा है, परन्तु मेरी गाँधीजी के प्रति बड़ी श्रद्धा है और मेरे साथी मज़दूरों में से बहुसंख्यक इसी प्रकार गाँधीजी के प्रति श्रद्धा रखते हैं।” एक दूसरे मज़दूर का लम्बा पत्र आया है, जिससे सिद्ध होता है कि सत्य और अहिंसा पर अवलम्बित गाँधीजी का कार्यक्रम किस प्रकार लंकाशायर तक के मज़दूरों की समझ में आ गया है। पत्र में लिखा है, “ईश्वर ने आपको अपना दूत बनाया है, आप हमारे शराब के व्यापार के शिकार अभाग्य गरीब भारतीयों के ही नेता नहीं हैं, परन्तु आप हमारे भी सबसे बड़े नेता और ईसा के सबसे बड़े अनुगामी हैं, क्योंकि हमारे अन्य नेता तो सब मचलूपी राष्ट्र के अधीन हैं। मैं कट्टर मद्य-विरोधी हूँ और यदि आप कभी रोकडेल की तरफ़ आवेंगे तो आपको शत होगा कि मैं प्रत्येक सभा में कुछ निमिट वही उपदेश करने में दिताता हूँ कि मद्य-निषेध ही हमारे सब कष्टों का इलाज है और गाँधीजी ही ऐसे पुरुष हैं जो इस सिद्धान्त पर दृढ़ हैं और सदा इसका प्रचार करते हैं। अब तो जब मैं किसी सभा में जाता हूँ तो लोग चिल्ला पड़ते हैं कि यह गाँधी का मित्र आगया। परन्तु मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं तो आपके जूता खोलने वाले की बरादरी भी नहीं कर सकता हूँ। मैं ईश्वर ने प्रार्थना करता हूँ कि वह आपके द्वारा हमारे मद्यनी राष्ट्र का ध्यान इस

और खींचे कि मज़दूर अपनी सब तनख्वाह इन शहरवालों में दे देने हैं और फिर हमारे देशवासी अपना स्वार्थ-सम्पन्न करने के लिए चाहते हैं कि हमारे भारतवासी भाई हमारा बनाया माल मर्राई और हमारे उसके द्वारा लाभ हो। अन्त में मेरी प्रार्थना है कि ईश्वर आपका, आपके पुत्र और साथियों का सहायक हो और आप इस देश को मध्य-निष्पेक्ष का पाठ पढ़ावें और फिर आपका देश आनन्द में रहे और हम और आप सब मिलकर उस ईश्वर का धन्यवाद गावें कि जो सबका भला करता है।”

अनेक मित्रों ने अपनी पुस्तकें और स्वागत-पत्र भेजे हैं, परन्तु उनमें से दो उदाहरण ही पाठकों के सामने रखूंगा। श्री ब्रेल्नक्रॉफ्ट ने, जिन्हें प्रायः सभी अँग्रेज़ी जानने वाले भारतवासी जानते हैं, अपनी पुस्तक *The Rebel India* (बागी भारत) गाँधीजी के लिए भेजी है। और जिस प्रकार मैंने उनको कुछ भारतीय ग्रामों में भ्रमण कराया था, मुझे इंग्लैंड के ग्रामों में भ्रमण कराने की इच्छा प्रकट की है। यह पुस्तक अन्य पत्रकारों की पुस्तकों के समान नहीं है, बल्कि बड़ी जिम्मेवारी और मर्मपूर्ण विषयों और निर्भीक विचारों से भरी पड़ी है, जिसकी प्रत्येक बात को साबित करने के लिए वह तैयार है। पुस्तक ऐसे उपयुक्त समय पर प्रकाशित हुई है कि इनने बागी-भारत को गुलामी का जुड़ा हटाने में कुछ-न-कुछ सहायता अवश्य मिलेगी। क्रिगेडियर जनरल क्रोजियर द्वारा मिन लेस्टर के नाम भेजी हुई ‘गांधी को एक शब्द’ नामक पुस्तक से तो बड़ा ही आनन्ददायक आश्चर्य हुआ। श्री क्रोजियर मिन लेस्टर को अपने पत्र में लिखते हैं, “श्री गांधी को आश्चर्य होगा कि

प्रौजी अफ़ मरा में भी उनका एक प्रशंसक है ।" पुस्तक में ऐसी रोमाञ्चकारी बातों का वर्णन है, जिसे पढ़कर खून उबलने लगता है, और लेखक ने उन सबका जिम्मेदार ब्रिटिश सरकार को ठहराया है । पाठकों को ज्ञात होगा कि श्री प्रोज़ियर को आयरलैंड में अपने पद से त्याग-पत्र देना पड़ा था, क्योंकि वह अश्वला और निःशस्त्र देश-भक्त त्त्वियों पर अत्याचार करनेवालों को क्षमा करने के लिए तैयार नहीं थे । उन्होंने ब्रिटिश सरकार पर सिद्धान्तों से विमुख होने का दोष लगाया है । वह गम्भीर होकर पूछते हैं, "इत छोटे-से सीधे-सादे हिन्दू को अखबार क्यों कोसते हैं ? क्यों उसे अधनंगा फ़कीर और यह कहकर संबोधित करते हैं कि यह ईसाई पादरियों को भारत से निकालना चाहता है ? इसी बात पर इन अखबारों ने सन् १६२०-२१ में आयरलैंड के निवासियों के प्रति विष उगला था और उनपर अपने स्वार्थ के लिए परस्पर हत्यायें करने का आरोप लगाया था । यह सब धूर्तता है । अखबार 'स्वामि-भक्ति', 'देश-भक्ति' आदि चिह्नाते हैं । स्वामि-भक्ति किसके प्रति ? क्या अखबारों के प्रति ? 'देश-भक्ति', परमात्मा जाने किसके लिए ! क्या लार्ड रादरमियर इस बात को जानते हैं ? भारतवर्ष स्वतंत्र हो सकता है; इंग्लैंड, फ़्रान्स और जर्मनी भी स्वतन्त्र हो सकते हैं । सब ऐसे स्वतन्त्र हो सकते हैं, जैसा कि उनको होना चाहिए, न कि जैसा वे होना चाहते हों—यशर्तें कि 'देश-भक्ति' कहलानेवाला संसार-प्रतिद्ध धर्म नष्ट कर दिया जाय और उसके स्थान पर मानव-धर्म की 'भक्ति' स्थापित की जाय ।" यह एक ऐसा आरोप है, जिसका उत्तर नहीं हो सकता और जो आज तक नहीं लिखा गया ।

v

v

बेकारों की संख्या ३०,००,००० तक पहुँच जाने का भय है, जब सोने के ढेर-के-ढेर हवाई जहाजों के द्वारा फ्रान्स को उड़े जा रहे हैं, जब कोयाध्यक्ष वजट की घटी पूरी करने के लिए उग्र तरीक़े काम में ला रहे हैं, और जब नौकरी पेशे के लोग विद्रोह करने पर उतारु हो रहे हैं— ऐसी स्थिति में सम्भव है कि वे भारत की ओर अधिक ध्यान देने का समय न निकाल सकें। वे शायद गांधीजी के इस प्रस्ताव पर विचार करने की इच्छा न रखते हों कि बराबरी का सामीदार बनाया जाने पर भारतवर्ष इंग्लैंड के वजट को एक बार ही नहीं, बरन् हमेशा के लिए पूरा करने में बहुमूल्य सहायता दे सकता है। कदाचित् वे वास्तविक पश्चात्ताप की भाषा में लिवरपूल में उच्चारण किये हुए श्री चैम्बरलेन के निम्नलिखित महत्वपूर्ण शब्दों को याद करके लाभ उठा सकते हैं—

“कभी-कभी ऐसा अवसर आता है, जब साहस बुद्धिमानी से अधिक रक्षा करता है, जब मनुष्यों के हृदयों को स्पर्श करनेवाला तथा उनके भावों को आलोकित करनेवाला कोई महान् भद्रापूर्ण कार्य ऐसे आश्चर्य को उत्पन्न करता है, जिसको नीतिकुशलता की कोई चाल प्राप्त नहीं कर सकती।”

ब्रिटिश मुद्रा के प्रति फिर विश्वास पैदा करने के लिए विलायत की राष्ट्रीय सरकार के प्रयत्न की ओर भारत-सचिव ध्यान दिलाते हैं; किन्तु स्वयं ब्रिटिश सरकार में पुनः विश्वास पैदा कराने के लिए न तो यहाँ और न भारत में ही कुछ प्रयत्न किया जाता है।

भारतीय मामलों में अनावश्यक हस्तक्षेप के आरोप की आशङ्का से लार्ड इर्विन इन बातों से जानबूझ कर अलग रह रहे हैं। इस बीच गांधीजी अपने प्रत्येक क्षण का उपयोग ब्रिटिश जनता के सामने भारत का दावा पेश करने में कर रहे हैं। उन्होंने 'डेलीमेल' में एक लेख लिख-

कर अपने 'मुखिया' अर्थात् भारतीय राष्ट्रीय भारत क्या चाहता है? महासभा (काँग्रेस) का परिचय कराते हुए संक्षेप में भारतीय मांग समझाई है। सुशिक्षित अँग्रेजों तक को भारत के सम्बन्ध में व्यवस्थित रूप से झूठा इतिहास बताकर, उनके मन में जो पूर्वग्रहों की धारणाएँ और दूषित पक्षपात दृढ़ कर दिया जाता है, हाउस आफ़ कामन्स में मजदूरदल के पार्लियामेण्टी सदस्यों के सामने एक भाषण देकर गांधीजी ने उसके तोड़ने का प्रयत्न किया। उन्होंने उनसे कहा, "आप लोग शरीर-से-शरीर मजदूर प्रतिनिधि होने के कारण इस देश के 'रत्न' हैं, किन्तु भारत के प्रश्न पर तो मैं आपके और दूसरे पक्षों के बीच कुछ अन्तर नहीं कर सकता। मुझे तो सबको समान प्रेम से जीतना है।" किन्तु मजदूरों के प्रतिनिधियों के सामने उन्होंने दरिद्रता का प्रश्न विस्तार से पेश किया। उन्होंने कहा—“यदि आपके मन में यह खयाल हो कि भारत की सर्वसाधारण जनता अँग्रेजों की शान्ति और व्यवस्था पर मोहित है, तो मैं यह खयाल आपके दिल से निखाल देना

मुलाज्ञात तो और भी अधिक सजीव थी। क्योंकि उसमें गांधीजी ने अपील अथवा प्रार्थना करने की वजाय, भारत के स्वातन्त्र्य की दलीलों जोर से पेश कीं तथा 'संरक्षणों' और 'विशेष अधिकारों' की विस्तार से चर्चा की। "सेना और अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर अधिकार के बिना मिली हुई स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता नहीं कही जा सकती; इतना ही नहीं, वह तो हलके रूप का स्वायत्त शासन भी न होगा। वह तो निरा भूला होगा, जिसे छूना तक उचित नहीं।" सीमाप्रान्त के दब्बे का भण्डाफोड़ करते हुए उन्होंने कहा कि पिछले ज़माने में अनेक हमलों और आक्रमणों के होते हुए भी हम उनका मुकाबिला करके टिके रहे, उसी तरह भविष्य में भी हम उनसे अपनी रक्षा कर सकेंगे। अंग्रेज़ी शासन की शान्ति और व्यवस्था अधिकांश में काल्पनिक है, और ब्रिटिश भारत की अपेक्षा देशी रियासतों में भारतीय अधिक शान्ति से रहते हैं। "इसलिए यह खयाल न कीजिए कि आपके बिना हमें आत्म-हत्या करनी पड़ेगी अथवा हम एक-दूसरे का गला काटने लगेंगे। इसका यह अर्थ नहीं कि हम हरेक अंग्रेज़ सौल्डर या सिपाही अथवा अफसर को निकाल बाहर करेंगे। हमें ज़रूरत होगी और यदि वे हमारी शर्तों पर रहना स्वीकार करेंगे तो हम उन्हें रक्खेंगे लेकिन मुझसे कहा गया है कि एक भी अंग्रेज़ सिपाही या सिविलियन हमारी मातहत में नौकरी न करेगा। मैं स्पष्ट ही कह देना चाहता हूँ कि इस जातिगत अभिमान का मतलब मैं नहीं समझ सकता। हम—अकेले महासभा नहीं बल्कि सभी पक्ष—इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि अंग्रेज़ शासन अत्यधिक खर्चीला है; और प्रौढ़ी खर्च राष्ट्र को कुचलकर मर शासन कर रहा है। हलके-से हलके दर्जों की स्वतन्त्रता मिलने की ए

मुसफर लाठी-प्रहार करें। मेरी नम्र सम्मति के अनुसार इन दोनों संरक्षणों का शर्मा वह गुलामी ही है।”

इसके बाद गांधीजी ने अल्पसंख्यक जातियों के संरक्षण का प्रश्न हाथ में लिया और उसके आर्थिक संरक्षणों की चर्चा की; क्योंकि इनकी माँग अँग्रेजों के हित के लिए, जो भारत में अल्पसंख्यक यूरोपियन जातियों में है, की जाती है। यह माँग सर्वथा असंगत है; इसमें न तो अँग्रेजों की ही शोभा है, न हिन्दुस्तानियों की। मुट्ठी-भर अँग्रेज ३० करोड़ ‘गुलामों’ के पास से संरक्षण माँगें, यह विचार गांधीजी से सहा नहीं जा सकता था। शत्रु से रक्षा की गारण्टी माँगी जा सकती है, मित्र से हरगिज नहीं। भारतवासी उनसे जो सेवा लें, उससे जितना संरक्षण मिले, उसीमें उन्हें सन्तोष मान लेना चाहिए। गांधीजी ने स्पष्ट शब्दों में कहा—“यदि अँग्रेजों का व्यापार भारतीयों के लिए हितकारक हो तो उसके लिए किसी संरक्षण की आवश्यकता नहीं। किन्तु इसके विपरीत यदि वह भारत-हित-विरोधी हो, तो चाहे कितने ही संरक्षण क्यों न हों, उनसे कुछ लाभ न होगा। विश्वास रखिए कि तीस करोड़ हिस्सेदारों के कन्धों पर से जुआ उतर जाने पर वे समृद्ध भागीदार होंगे और इंग्लैंड को, किसी व्यक्ति अथवा राष्ट्र को लूटने में नहीं प्रत्युत् सब राष्ट्रों के कल्याण के लिए, साझेदारी से सहायता पहुँचाने के लिए तत्पर रहेंगे।”

बम्बई के मिल-मालिकों से समझौता या उनके शब्दों में ‘सौदा’ करके गांधीजी ने ज़बरदस्त भूल की। ऐसा वहाँ के मेम्बरों का खयाल था। पर गांधीजी ने तो इससे भी आगे बढ़कर कहा कि, केवल बम्बई ही नहीं अहमदाबाद के मिल मालिकों से भी समझौता या ‘सौदा’

के अपने घर की ओर आना चाहिए । मित्र इन बात की शिकायत कर रहे हैं कि गांधीजी महल और होटल छोड़कर इतनी दूर रह उनका घर रहे हैं । अंग्रेज मित्र सेरट जेम्स के महल के निकट के अपने घर देने के लिए तत्परता दिखा रहे हैं, किन्तु गांधीजी ने निश्चय किया है कि यह गरीबों का घर जो अपना घर बन गया है उसे न छोड़ा जाय । मित्रों से मिलने के लिए एक दफ्तर रखा जा सकता है—इसके लिए कई भारतीय मित्रों ने अपने घर देने की इच्छा प्रकट भी की है; किन्तु ईस्ट एण्ड में घूमने जाते समय जो मित्र उनसे मिलते हैं, और जो बालक उन्हें घेरकर उनसे किसी समय बातें कर लेते हैं, उन्हें वे छोड़ नहीं सकते । वस्तुतः इन बालकों के साथ की एक खास मुलाकात से गांधीजी को बड़ा आनन्द हुआ । उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ, मानों वह स्वयं आश्रम में हों, बालकों के सादे किन्तु गहरे और चकित करनेवाले प्रश्नों का उत्तर देते हों और उनके द्वारा सत्य और प्रेम का सन्देश फैलाते हों । वे पूछते हैं—‘मिस्टर गांधी, आपकी भाषा क्या है ?’ और गांधीजी उन्हें अंग्रेज़ी और हिन्दी भाषाओं के समान शब्दों की व्युत्पत्ति बताते हैं और समझाते हैं कि आखिर तो हम सब एक ही पिता के पुत्र हैं । उनसे वह अपने बचपन की बातें करते हैं, और यह समझाते हैं कि धूँसे का जवाब धूँसे से देने की अपेक्षा धूँसे से न देना कितना अच्छा है । स्वयं कच्छ क्यों धारण करते हैं, और स्वयं उनके बीच यहां क्यों रहते हैं, यह भी उन्हें बताते हैं । एक दिन उन्होंने कहा—‘मेरे लिए तो सच्ची गोलमेज़-परिपद् यह है । मैं जानता हूँ कि ऐसे मित्र हैं, जो मुझे घर दे सकते हैं और मेरे लिए उदारता से पैसे खर्च कर सकते हैं, किन्तु

ही जीवन को समृद्ध और जीने योग्य बनाने हैं। जिन स्त्री-पुरुषों के लिए जीवन एक शतरंज का निमग्न (बोर्ड) है और साथी खिलाड़ी को मात

देना सर्वाधिक चतुराई है, उनके मिलने में कुछ सार उनके मित्र नहीं। ऊपर कहे एक दो सम्मिलनों की यहां चर्चा

करना चाहता हूँ। एक दिन तो ऐसा मालूम होता था, मानों वह केवल हस्ताक्षर—दस्तखत—करने का ही दिन हो। गांधीजी के हस्ताक्षर कराने में सफलता प्राप्त करनेवाला प्रत्येक व्यक्ति अपनी जीवन-कथा सुना जाता।

वेन प्लेटन नामक एक भाई मिस लेस्टर के साथी हैं। हमारे लिए सुबह से शाम तक निरन्तर काम करते रहते हैं; किन्तु गांधीजी की नज़र

सदुपयोग में चढ़ने का कभी प्रयत्न नहीं करते। एक दिन वह एक किताब लाये और उसमें गांधीजी के हस्ताक्षर

करवाने की इच्छा प्रकट की। उन्होंने कहा, “गांधीजी, मैंने यह पुस्तक एक शिलिंग में खरीदी है। उस समय मैं ‘डेली हेराल्ड’ में काम करता था। वहां यह पुस्तक समालोचना के लिए आई, किन्तु तुच्छ मानी जाकर समालोचना के अयोग्य समझी गई और इसलिए बेच डालने के लिए रही में डाल दी गई। इससे मुझे यह एक शिलिंग में मिल गई। मैं इसे घर ले गया और शुरु से अखीर तक पढ़कर उसका तत्काल उपयोग किया। किंग्सली-हाल में एकत्र लोगों को मैंने आपका परिचय कराया, और आपके सम्बन्ध में कई व्याख्यान दिये। उस दिन से मेरा आपके साथ परिचय आरम्भ हुआ है।”

गांधीजी इससे आश्चर्यचकित हो प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा—
“अच्छा, म्यूरेयल से मेरा परिचय कराने वाले तुम थे ?”

अंदर बुलाया। पास पहुँचकर उसने आत्म-कथा सुनाई, और साथ में कहा—

“साहब, मैं आपके और आपके उद्देश्य के लिए सचमुच शुभ कामना करता हूँ। मैंने दुनिया खूब देखी है। महायुद्ध में मैंने नौकरी की; जगह-जगह फँका गया; ठिठुरते पैरों गेली-बोली से सालेनिया के लिए कूच का हुक्म हुआ, और अकथनीय कष्टों का सामना करना पड़ा। आगामी युद्ध में नौकरी करने की अपेक्षा तो मैं शीघ्र ही जेल चला जाना पसन्द करूँगा। साहब, वस्तुतः यह एक अत्यन्त भयङ्कर कार्य है। मैं तो आपके लिए लड़ना अधिक पसन्द करता हूँ। आपके उद्देश्य में सफलता मिले, यही मैं चाहता हूँ।” वह अपने साथ अपनी लड़की और दूध पहुँचानेवाले दामाद के फोटो लाया था।

वह जाने की तैयारी में था कि गाँधीजी ने उससे पूछा—“तुम्हारे कितनी सन्तान हैं?”

उसने कहा—“साहब, आठ; चार लड़के और चार लड़कियाँ।”

गाँधीजी ने कहा—“मेरे चार लड़के हैं, इसलिए मैं तुम्हारे साथ आधे रास्ते तक तो दौड़ सकता हूँ!”

यह सुनकर सारा घर हँसी से गूँज उठा।

कदाचित् थोड़े ही लोग इस बात पर विश्वास करेंगे कि जब गाँधीजी से यह कहा गया कि चार्ली चैपलिन उनसे मिलना चाहते हैं, तो

उन्होंने निर्दोष भाव से पूछा कि यह महापुरुष कौन चार्ली चैपलिन हैं? अनेक वर्षों से गाँधीजी का जीवन कुछ ऐसा हो

गया है कि उन्होंने अपने लिए जो काम निश्चित कर रखा है, उसे करते-करते सामने आ जाने वाले काम के सिवा दूसरा कुछ देखने या

जनता अंग्रेजी भाषा-भाषी है और उनके पद में एक प्रकार का मिष्टि-सम्बन्ध सन्निहित है। लाहौर महानभा ने भारतीयों के दिमाग में से साम्राज्य का खयाल धो डाला है और स्वतन्त्रता को उनके सामने रखा है। करांची के प्रस्ताव ने इसका यह सन्निहित अर्थ किया कि एक स्वतन्त्र राष्ट्र की हैसियत से भी हम ग्रेटब्रिटेन के साथ, अवश्य ही यदि वह चाहे तो सामेदारी स्थापन कर सकते हैं। जबतक साम्राज्य का खयाल बना रहेगा, तबतक डोर इंग्लैण्ड की पार्लमेण्ट के हाथ में रहेगी; किन्तु जब भारत ग्रेटब्रिटेन का एक स्वतन्त्र सामेदार होगा, तब सूत्र-संचालक लन्दन के बजाय दिल्ली से होगा। एक स्वतन्त्र सामेदार की हैसियत से भारत, युद्ध और रक्तपात से थकित संसार के लिए, एक विशेष सहायक होगा। युद्ध के फूट निकलने पर उसे रोकने के लिए भारत और ग्रेटब्रिटेन का समान प्रयत्न होगा—अवश्य ही हथियारों के बल से नहीं, चरन् उदाहरण के दुर्दमनीय बल से। आपको यह व्यर्थ का श्रयदा बहुत बड़ा दावा प्रतीत होगा और आप इस पर हँसेंगे। किन्तु आपके सामने दोलनेवाला उस राष्ट्र का एक प्रतिनिधि है, जो उसके दावे को पेश करने के लिए ही आया है, और जो इससे किसी क्रूर कम पर रक्षा-मन्द होने के लिए तैयार नहीं है; और आप देखेंगे कि यदि वह मान्य हुआ तो मैं पराजित होकर चला जाऊँगा, किन्तु अपमानित होकर नहीं। मैं ज़रा भी कम न लूँगा; और यदि माँग पूरी नहीं की गई, तो मैं देश को और भी अधिक विस्तृत और भयङ्कर परीक्षाओं में डालने के लिए आह्वान करूँगा, और आपको भी हार्दिक सहयोग के लिए आह्वान करूँगा।

एक दूसरी सभा में उन्होंने कहा—“हमारे अधिसूचना”

यह बात कि वह पूर्ण स्वतन्त्रता चाहते हैं, और उनमें दूरा भी कम न लेंगे, गाँधीजी को इस कार्य की कठिनाइयों के प्रति विशेष सज्जग बना देती हैं। क्योंकि परिपक्व प्रतिदिन बहुत मन्द गति से रेंगती हुई चलती है, उन्हें अब यह स्पष्ट हो गया है कि कार्य अत्यन्त दुःसाध्य है। सर अलीइमाम के शब्दों में परिपक्व राष्ट्र के चुने हुए प्रतिनिधियों की नहीं प्रत्युत पार्लियामेंट के प्रधान मन्त्री की पसन्द के प्रतिनिधियों की बनी हुई है। प्रधान-मन्त्री ने कहा, “मैं अपने आपको बलिदान का बकरा न बनाऊँगा; किन्तु मैं चाहता हूँ कि आप सब अपने बलिदान के बकरे बनें।” प्रधानमन्त्री के इन शब्दों में उनके योग्य अनजान मज़ाक था, जिसे वहाँ के विनोदी पत्रों ने एक कल्पित राक्षस के रूप में कार्टून (व्यङ्गचित्र) बनाकर अमर कर दिया। परिपक्व के मुस्लिम मित्रों के सामने ‘राष्ट्रीय मुसलमानों’ का नाम तक लेना एक प्रकार का शाय है, और दस वर्ष पहले जिस व्यक्ति को स्वयं उन्होंने गाँधीजी से परिचित कराते हुए सम्माननीय और वेशक्रीमती बतलाया था, और जो हमारे सब कठिन समयों में राष्ट्र के साथ खड़ा रहा है, आज मुसलमानों के एक प्रभावशाली दल के विचार प्रकट करने के लिए आवश्यक नहीं समझा जाता। गाँधीजी की पूर्ण समर्पण की बात से हिन्दू मित्र भयभीत हैं, और छोटे अल्पसंख्यक वर्गों के नामधारी प्रतिनिधियों को इस समर्पण में अपने हितों के स्वाहा हो जाने का भय है। कोई आश्चर्य नहीं, यदि गाँधीजी का यह वक्तव्य अरण्य-रोदन निद्र हो कि जो लोग राष्ट्र हित साधन करना चाहते हैं वे कोई अधिकार न माँगे, और जो अधिकार चाहते हैं उनके लिए सुविधा कर दें।

करगता का ही कारण था कि गांधीजी को अपने मस्तिष्क के सर्वोच्च विचारों का नहीं प्रत्युत उनके अन्तरतम में गहराई में बैठे हुए भावों का प्रवाह बहाने के लिए तत्पर होना पड़ा।

किन्तु यदि श्री फेनर ब्राकवे और उनके दल ने अपने आपको वास्तविक मित्र सिद्ध कर दिया है, तो गाँधीजी बड़ी तेज़ी से नये मित्र बना रहे हैं, जो आवश्यकता के समय मित्र साबित भावी मित्र

होगे और श्री ब्राकवे के बहादुर दल की शक्ति बढ़ावेंगे।

यद्यपि भूठे इतिहास की शिक्षा और अखबारों के अत्यन्त हानिकर प्रचार के कारण बहुत अज्ञान फैला हुआ है; फिर भी भारत के सम्बन्ध में सच्ची जानकारी प्राप्त करने के लिए चारों ओर लोग व्यापक इच्छा प्रदर्शित कर रहे हैं और नवयुवकों के अनेक दल गांधीजी से मिलकर कांग्रेस या सभा और बातचीत करने की प्रार्थना कर चुके हैं। इनमें आक्सफ़ोर्ड हाउस के सदस्य—आक्सफ़ोर्ड वालों का एक दल उल्लेखनीय है, जो या तो ईष्ट-एण्ड (शरीरों का निवास-स्थान) में बस गये हैं, या अपने समय का सर्वोच्च भाग ईस्ट-एण्ड-निवासियों की सेवा में लगाते हैं। गाँधीजी के सक्षेप में भारत की मँग पेश करने के बाद, शुद्ध भाव से जानकारी के लिए, उनमें कुछ प्रश्न पूछे गये। उनमें के कुछ उत्तर-साहित नीचे देना है—

प्र०—क्या आप ब्रिटिश ओकुप की एकदम हटा देना चाहते हैं ?

उ०—अवश्य मैंने उम्मीदें हटाये जाने की कभी कल्पना नहीं की।

किन्तु इसका अर्थ ग्रेट ब्रिटेन से सर्वथा प्रभुत्व नहीं है। यदि ग्रेट ब्रिटेन पूरी सामंजस्य करेगा, तो मैं उसे समझ कर स्वीकारूँगा; किन्तु वह वास्तविक

स्वतन्त्रता पर मर मिटने के लिए हमें लड़ाई का अवसर मिले। इसका क्या कारण है कि आप अफ़ग़ानों की योग्यता के सम्बन्ध में प्रश्न नहीं करते ? हमारी संस्कृति उनसे हीन नहीं है। अथवा क्या आप यह खयाल करते हैं कि किसी के स्वभाव में ग़ुलामी हुए बिना स्वतन्त्रता प्राप्त करना और उसका उपयोग करना कठिन है ? अच्छा, यदि हम कायर जाति हैं, तो आप हमें हमारे भाग्य पर जितनी जल्दी छोड़ दें उतना ही अच्छा है। यह अच्छा है कि इस पृथ्वी से कायरों का बोझ हट जाय। किन्तु कायर सदैव के लिए नहीं रह सकते। आप नहीं जानते कि युवा-वस्था में मैं कितना कायर था, पर आप स्वीकार करेंगे कि आज मैं ज़रा भी कायर नहीं हूँ। मेरे उदाहरण का गुणा कीजिए आप सारे राष्ट्र की कायरता दूर हुई देखेंगे।

प्र०—क्या भारत को ईसाइयों से कुछ लाभ पहुँचा है।

उ०—अप्रत्यक्ष रूप में। मैं इस सम्बन्ध में एक से अधिक बार बोल चुका हूँ। कुछ सज्जन ईसाइयों के संसर्ग से हमें अवश्य लाभ पहुँचा है। हमने उनके जीवन का अध्ययन ईसाइयों का प्रभाव किया, हम उनके संसर्ग में आये और उन्होंने स्वभावतः ही हमें ऊँचा उठाया। किन्तु पादरियों के प्रचार कार्य के सम्बन्ध में मुझे सावधानी से बोलना होगा। कम-से-कम मैं जो कह सकता हूँ वह यह कि मुझे संदेह है कि उन्होंने हमें किसी तरह लाभ पहुँचाया हो। अधिक-से-अधिक मैं यह कहूँगा कि उन्होंने भारत को ईसाइयत से पीछे हटाया है और ईसाई-जीवन तथा हिन्दू अथवा मुस्लिम-जीवन के बीच दीवार खड़ी कर दी है। जब मैं आपकी धर्म-पुस्तकें पढ़ता हूँ,

गाँठ पर मिली हुई वधाइयों में अनेक इन नये मित्रों की भेजी हुई हैं, जिनमें बहुतसे बालक हैं, जिन्होंने साथ में पूछा—“अपने साथी”—भेजे हैं और “चना गांधी” को इस अवसर की सुधारिकायाँ दी हैं।

भारतीय विद्यार्थियों की सभा में, जहाँ गांधीजी बड़ी रात तक मज़ाक और सभ्य व्यंगों से उन्हें खुश करते रहे, विद्यार्थियों ने कई बड़े दिल-चस्प सवाल किये। मैं सब तो दे नहीं सकता, किन्तु संगीन बनाम प्रेम कुछ अत्यन्त महत्वपूर्ण यहाँ देता हूँ। कुछ उत्तर पहले दिये जा चुके हैं।

प्र०—क्या मुसलमानों से एकता की आपकी मांग वैसी ही बेहूदा नहीं है, जैसी कि एकता की मांग सरकार हमसे करती है? ऐसे महत्वपूर्ण प्रश्न का हल रोकने के बजाय आप अन्य सब बातों को क्यों नहीं छोड़ देते ?

उ०—आप दुहेरी भूल करते हैं। मैंने जो मुसलमानों से कहा है, उसके साथ सरकार जो हमसे कहती है, उसका मुक्ताविला करने में आपने भूल की है। ऊपर से देखने में कोई यह खयाल कर सकता है कि वस्तुतः यह एक ही सी मिसाल है, किन्तु यदि आप गहराई से विचार करेंगे तो आपको मालूम होगा कि इनमें ज़रा भी समानता नहीं है। ब्रिटिश व्यवहार या मांग को संगीन के बल का सहारा है, जब कि मैं जो कुछ कहता हूँ वह हृदय से निकला होता है और प्रेम के बल के सिवा उसका और कोई सहारा नहीं है। एक डाक्टर और एक हत्याकारी दोनों एक ही शस्त्र का उपयोग करते हैं, किन्तु परिणाम दोनों के भिन्न होते हैं। मैंने जो कुछ कहा है, वह यही है कि मैं कोई ऐसी मांग पूरी

आपसे कहा कि मैं इस प्रश्न का विचार हिन्दूपन की दृष्टि से नहीं कर सकता, प्रत्युत् राष्ट्रीयता की दृष्टि से, सब भारतीयों के अधिकार और हित की दृष्टि से ही इसपर विचार किया जा सकता है। इसलिए मुझे यह कहने में ज़रा भी हिचकिचाहट नहीं है, कि कांग्रेस सब हितों की रक्षा होने का दावा करती है—अंग्रेज़ों तक के हितों की वह रक्षा करेगी, जब तक कि वह भारत को अपना घर समझने और लाखों मूक लोगों के हितों के विरोधी किसी हित का दावा न करेंगे।

प्र०—आपने गोलमेज़-परिपद् में देशी राज्यों की प्रजा के सम्बन्ध में कुछ क्यों नहीं कहा ? मुझे भय है कि आपने उनके हितों का बलिदान कर दिया।

उ०—वे लोग मुझसे गोलमेज़-परिपद् के सामने किसी शाब्दिक घोषणा की आशा नहीं करते थे, प्रत्युत् नरेशों के सामने कुछ बातें रखने की आशा अवश्य रखते थे, जो कि मैं रख चुका हूँ। असफल होने पर ही मेरे कार्य की आलोचना करने का समय आवेगा। अपने ढंग से काम करने की इजाज़त तो मुझे होनी ही चाहिए। और मैं देशी राज्यों की प्रजा के लिए जो कुछ चाहता हूँ, गोलमेज़-परिपद् वह मुझे दे नहीं सकती। वह मुझे देशी नरेशों से लेना होगा। इसी तरह का प्रश्न हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य का है। मैं जो कुछ चाहता हूँ, उसके लिए मैं मुसलमानों के सामने घुटने टेक दूँगा, किन्तु वह मैं गोलमेज़-परिपद् के पास नहीं कर सकता। आपको जानना चाहिए कि मैं कुशल एडवोकेट या वकील हूँ और कुछ भी हो, यदि मैं असफल हुआ तो आप मुझसे मेहनताना वापिस ले सकते हैं।

: ४ :

भारत के मित्रों की एक खास सभा में, जहाँ पहली बार ही सच श्रोताजन ज़मीन पर बैठे थे, पलथी मारकर हमने प्रार्थना की। गांधीजी ने सबसे भारत के लिए और उसके ध्येय की सफलता के काले बादल लिए प्रार्थना करने को कहा। “जहाँ तक मनुष्य का प्रयत्न चल सकता है, वहाँ तक तो मैं अभी असफल होता हुआ ही दिखाई देता हूँ। मेरे ऊपर वह बोझ डाला जा रहा है, जिसे उठाने में मैं असमर्थ हूँ। जिसके करने के दाव कुछ भी करने को न रहे और प्रयत्न करने पर भी जिसका कुछ परिणाम न हो, ऐसा यह काम है। परन्तु इनकी कोई पर्वाह नहीं। कोई भी प्रामाणिक और सच्चा प्रयत्न कभी असफल नहीं होता।” अल्पसंख्यक समिति में किये गये इश्वरार में भी यही दावे राजनैतिक भाषा में कही गई थीं। ज़हर का प्याला करीब-करीब पूरा भर गया था। उसे पूरा करने के लिए प्रतिनिधियों में ने कुछ लोगों के भाषण और उनका समर्थन करता हुआ प्रधानमन्त्री का भाषण हुआ। सरकार के नामज़द प्रतिनिधि कितना ही विरोध क्यों न करें, जिनके कि प्रतिनिधि होने का वे दावा करते हैं वे भी गांधीजी के इस विश्लेषण के सच होने के सम्बन्ध में गम्भीरतापूर्वक शंका नहीं कर

किया, न कोई पुकार मचाई, और न वे उसके लिए आतुर ही हैं।” वह स्पष्टतः यह मानते हैं कि उनकी जाति का हित स्वराजप्राप्त और स्वतन्त्र भारत के अनित्यत ब्रिटिश-सरकार के हाथों में ही अधिक सुरक्षित रहेगा।

अपने सामने इन मित्रों के ऐसे वक्तव्य होने पर प्रधानमन्त्री का काम तो बड़ा आसान हो गया। प्रधान-मन्त्री का भाषण, जिसमें सत्य का अभाव था, सुनकर तो बन्दर और बिल्ली और बन्दरवाली मसल दो बिल्लियों की कहानी का एकदम

स्मरण होता है। उस व्याख्यान का स्वर, उसके शब्दों का बज्जुन ‘प्रामाणिकता से’ और ‘मुझमें विश्वास रखिए’ के बराबर प्रयोग ने उनकी बाज़ी खुली करदी। “लेकिन मान लो कि मैं सरकार की तरफ़ से आपसे कहूँ और पार्लियामेंट ने भी उसको स्वीकार कर लिया कि काम का भार आप ही उठा लें, तो आप यह अच्छी तरह जानते हैं कि आप छः इञ्च भी न जा सकेंगे कि अटक जायेंगे।” क्या कभी सच्चे दिल से यह प्रस्ताव रखा गया था ? इसी भाषण में वह अभिमानपूर्वक कहते हैं, “यह सरकार अपने प्रस्ताव पेश करेगी तो वह अखिरी शब्द होगा, उसी अंश में कि जिस अंश में सृष्टि की परिस्थिति किसीको किसी विषय पर अखिरी शब्द कहने देती है।” !!!

जब हम धुरे-धुरे परिणाम के लिए तैयार हैं, तो, कुछ भी हो, उसमें हमारी कोई हानि नहीं। इसलिए जब गांधीजी के पास कुछ क्रोध में भरे हुए और कुछ दुःख अनुभव करते हुए मित्र आये, तो उन्होंने उनसे कहा—“यह सब भले के लिए है। हम उस सीमा के निकट आ रहे हैं, जहां से हमारा रास्ता अलग हो जायगा, और पद-पद पर मामला

विलकुल विदेशी हूँ, तो भी मेरा और मेरे काम का वे भला चाहते हैं। वे जानते हैं कि मैं और मेरा काम एक ही है और इसलिए वे, छोटे से लेकर बड़े दर्जे के, सब मुस्कराते हुए मेरा स्वागत करते हैं और मुझे आशीर्वाद देते हैं। और इसलिए मुझे यह आश्वासन मिलता है कि मेरा ध्येय सच्चा है और उसके साधन स्वच्छ और अहिंसक हैं, तब-तक सब भला ही होगा।”

विद्वान तथा बुद्धिमानों में से भी अच्छे-अच्छे लोग गांधीजी से सम्बन्ध जोड़ना चाहते हैं। श्री ब्रेल्सफोर्ड और श्री लास्की ने गांधीजी के साथ बड़ी देर तक बातचीत की। श्री शॉ डेस्मॉण्ड भी उनसे मिले। बातचीत में राजनीति में से, जिसे वह कहते थे कि वह धिक्कारते हैं, वह ताफ़ निकल गये और उन्होंने इसी विषय पर बातचीत की कि पश्चिम जिस गहरे दलदल में पँना हुआ है और जिसमें वह अधिकाधिक डूबता जाता है, उसमें से उसे कैसे निकालें। उन्होंने बच्चों की पढ़ाई के सम्बन्ध में चर्चा की और जब गांधीजी ने उनसे संयम के मूल्य के विषय में अपने जीवन के अनुभव कहे, और यह कहा कि बच्चों के या बड़ों के जीवन में वह कितना बड़ा काम करता है, तो वह बड़े ध्यान से सुनते रहे। उन्होंने पूछा—“वर्तमान अन्धाधुन्धी का कारण क्या है?” गांधीजीने कहा—“एक का दूसरे को चूटना। कमज़ोर राष्ट्रों का शक्ति-शाली राष्ट्रों द्वारा चूना जाना मैं न कहूँगा, परन्तु एक राष्ट्र का अपने भाई दूसरे राष्ट्र को चूटना। और मशीन का मेरा मूल विरोध इसी बात पर आधार रखता है कि उसीके कारण एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को चून सकता है। अग्ने तई तो वह निर्जीव वस्तु है और उसका अच्छा और

देखर के हाथ में सबसे बड़े हथियार हैं उस कार्य में लगे हुए कई कार्यकर्ता आपको वहाँ मिलेंगे। वहाँ आप जब तक रहें तबतक के लिए हम यह स्कूल आपके भिषुर्द कर देंगे। और अपने साथ आप अपने भारतीय कार्यकर्ताओं को भी लावेंगे तो हमें बड़ा आनन्द होगा। रोम्यां-रोलां और दूसरे मित्र जो यूरोप में और खासकर जर्मनी में आपके आदर्शों का प्रचार करते हैं, उन्हें आने के लिए और आपसे मुलाकात करने के लिए हम कहेंगे।”

हेमवर्ग ने कुछ मित्र तार द्वारा कहते हैं—“मिशनरी की हैसियत ने हमने भारत की आत्मा को समझने का प्रयत्न किया है। आपके (गांधीजी के) बारे में जो कुछ भी मिला वह सब पढ़ चुकने के बाद, ईसाई होने के कारण, हम आपसे सम्बन्ध जोड़ना चाहते हैं। हमारे जीवन में यह बड़े महत्व की बात होगी। क्या आपकी पुस्तकें पढ़ने के वनित्यत अधिक निकट का सम्बन्ध जोड़ना सम्भव हो सकेगा? क्या हम आपसे कभी किसी जगह मिल सकते हैं?”

और मैडम मांटिमोरी की गांधीजी से जो मुलाकात हुई उसे मैं कैसे भुला सकता हूँ? गांधीजी ने उनका स्वागत करते हुए कहा, ‘हम एक ही कुटुम्ब के हैं।’ मैडम मांटिमोरी ने कहा, ‘मैं आपका बच्चा की तरह से स्वागत करती हूँ।’ गांधीजी ने कहा, “आपके बच्चे तो मेरे भी बच्चे हैं। हिन्दुस्तान में मित्र लोग मुझे आपका अनुकरण करने को कहते हैं। मैं उनसे कहता हूँ, ‘नहीं’। मुझे आपका अनुकरण नहीं करना चाहिए, परंतु आपको और आपके तरीके के अन्तर्गत सत्य को पचा जाना चाहिए।” मैडम मांटिमोरी ने भीठी इटालियन भाषा में,

: ५ :

यह स्मरण होगा कि गाँधीजी ने अल्पसंख्यक समिति में समझौते की निष्फलता के सम्बन्ध में जो व्याख्यान दिया वह चर्चा में दूसरी महत्व की बात थी। संघशासन-समिति का उनका साम्प्रदायिक प्रश्न व्याख्यान पहली बात थी। इस व्याख्यान ने कुछ बड़े-बड़े लोगों को सचेत कर दिया है, परन्तु इतने उन्हें यह विश्वास भी हो गया है कि गाँधीजी किसी भी कारण से बात पर परदा नहीं डालेंगे। 'मैचेस्टर गार्जियन' जैसे पत्र भी यह मानने के लिए तैयार नहीं थे कि अल्पसंख्यक समिति संघशासन-समिति के विचार-कार्य के बीच में बिना किसी आवश्यकता के ही हुता दी गई थी, और कौमी अर्थात् साम्प्रदायिक प्रश्न को अल्पधिक महत्व दिया गया था। जिनका इतने सम्बन्ध था उन्हें यह समझाने में कि गाँधीजी ने सच्चे दिल से यह कहा था कि सरकार को अपनी बाज़ी खोल देनी चाहिए, यह उनका फर्ज़ है, उनका एक सप्ताह चला गया।

यहाँ कुछ सवाल-जवाब दिये जाते हैं।

प्र०—यदि सब बातों से कौमी प्रश्न का अधिक महत्व नहीं है, तो आपने ही एक समय यह क्यों कहा था कि जब तक यह प्रश्न हल न हो

समझ लेना, क्योंकि आखिर तो वे हाथ में हाथ मिलाकर काम करने वाले साथी ही तो हैं। वर्तमान परिस्थिति में सम्झौता करने में यदि हम असमर्थ हुए तो क्या यह कोई आश्चर्य की बात है ! इसीलिए तो मैंने यह कहा कि पहले ही हमारे मार्ग में प्रतिद्वन्द्व डाले गये हैं और अब यह कहकर कि शान्त-विवान की रचना के प्रश्न का निराप होने के पहले कौमी प्रश्न का निराप होना चाहिए, हमारे मार्ग में और अधिक प्रतिद्वन्द्व नष्ट डालिए। मैं उनसे यह कहता हूँ कि हमें यह जान लेना दो कि मिलेगा क्या, ताकि उनके आचार पर मैं इस बेमेल जुने हुए मंडल में एकाग्र होने का प्रयत्न करूँ। ईश्वर के लिए हमारे पास कोई ठोस बात होने दो। हमारे दुश्मन की यह दूसरी डोरी होगी और वह मानते को हम करने में मदद करेगी, क्योंकि फिर मैं उनसे यह कह सकूँगा कि वे एक सही संज्ञा की ओर का नजर कर रहे हैं। परन्तु आस मैं उनके मानते कुछ में नहीं रख सकता हूँ। नवजात हल न की हो तो मैंने खानगी गन्ध, आसनरत्न आदि कई मार्ग इस्तेमाल किये हैं। हात यह है।

प्र०—तो हमने क्या मैं यह समझ हूँ कि अब कौमी प्रश्न को अधिक महत्त्व नहीं देते हैं।

उ०—मैंने यह कभी नहीं कहा। मैं यह कहता हूँ कि मुख्य बात विचार खाल खोल देना चाहिए था, उसे इस प्रश्न के द्वारा दब जाने दिया गया है।

लेबो-होर्टल में अमेरिका के प्रवक्तारों की तरफ से गाँधीजी को वात्सल्य करने के लिए आमन्त्रण दिया गया था और उसके उत्तरादन में एक निरुत्तरि मोच का आयोजन किया गया था। वहाँ गाँधीजी ने

मजबूर होंगे । इससे कुछ समय के लिए उनका दुःख दूर होगा, परन्तु अन्तिम विनाश के आने में अधिक देर न लगेगी ।

गावर स्ट्रीट में हुई भारतीय विद्यार्थियों की सभा में भारतीय वातावरण था । भारत के राष्ट्रीय गीत और वन्देमातरम् हमने वहाँ पहली बार ही सुने । वातावरण अनुकूल था, इससे हमने सभा में ही प्रार्थना की । सभा में पूर्ण गौरव और शोभा थी । दूसरी सभा में गोल्ड कोस्ट

के एक हृदयी विद्यार्थी ने, एक रूस के विद्यार्थी ने, एक कोरिया के विद्यार्थी ने और एक अंग्रेज़ विद्यार्थी ने प्रश्न पूछे थे । और यदि समय होता तो और विद्यार्थी भी पूछते । विद्यार्थियों में सत्य की शोध का भाव था, यह इस सभा की विशेषता थी । इसका गांधीजी पर बड़ा अंतर पड़ा । और उन्होंने अपना हृदय खोल दिया और वर्तमान उद्योगप्रधान युग में आत्मा को हिला देनेवाले प्रेम और सत्य के रहस्य के सन्देश दिये । इन दोनों सभाओं में उनको ऐसा प्रतीत होता था, मानां वह अपने प्रिय पुत्रों के बीच हों । वहाँ उन्होंने यह महसूस किया कि उनको कोई ऐसा सन्देश देना चाहिए, जिसे वह अपने हृदय में रखे रहें और उसको अपने जीवन के व्यवहार में लावें । इस प्रवचन की प्रस्तावना के रूप में उन्होंने सत्याग्रह-युद्ध की विशेषतायें बताते हुए बतलाया कि किस प्रकार महासभा ने दूसरों पर प्रहार करके चोट पहुँचाने का सदियों पुराना तरीका छोड़कर स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए स्वयं अपने पर प्रहार सह लेने का रास्ता शक्तिपूर्वक किया है, और कष्ट-सहन की एक मजिल तै कर लेने के बाद देश ने उन्हें इस आशा से अपना एकमात्र प्रतिनिधि बनाकर भेजा है कि “भारत ने जो

प्रयत्न में पशु-समान बन जाते हैं, वे न केवल स्वयं ही गिरते हैं, प्रत्युक्त मानव-समाज को भी गिराते हैं। और मनुष्य-स्वभाव को पतित हुआ देखने में मुझे अथवा अन्य किसीको आनन्द हो नहीं सकता। यदि हम सब एक ही प्रभु के पुत्र हैं, और यदि हम सबमें एक ही ईश्वर का अंश है, तो हमें प्रत्येक मनुष्य के—फिर वह सजातीय हो अथवा विजातीय—पाप का भागीदार होना ही चाहिए। आप समझ सकते हैं कि किसी मनुष्य के हृदय में पाशविक वृत्ति को जगा देना कितना अप्रिय एवं दुःखद कार्य है, तब फिर अंग्रेजों में, जिनमें कि मेरे अनेक मित्र हैं, इस वृत्ति को जगाना तो और भी कितना अधिक दुःखद होगा ? इसलिए मैं जो प्रयत्न कर रहा हूँ, उसमें आपने हो सके उतनी सहायता करने की मैं आपसे याचना करता हूँ।

“भारतीय विद्यार्थियों से मेरी प्रार्थना है कि वे इस प्रश्न का पूरी तरह से अध्ययन करें। यदि सत्य और अहिंसा की शक्ति पर आपका सचमुच विश्वास हो। तो ईश्वर के नाम पर इन दोनों विद्यार्थियों के लिए काम को—केवल राजनैतिक क्षेत्र में ही नहीं—अपने दैनिक-जीवन में प्रकट करें, और आप देखेंगे कि इस दिशा में आप जो-कुछ भी करेंगे, उससे मुझे आन्दोलन में मदद मिलेगी। यह सम्भव है कि आपके निकट सम्पर्क में आनेवाले अंग्रेज स्त्री-पुरुष संसार को यह विश्वास दिलावें कि भारतीय विद्यार्थी जैसे भले और सत्यनिष्ठ विद्यार्थी उन्होंने कभी नहीं देखे। क्या आप नहीं समझते कि इससे हमारे देश की प्रतिष्ठा बहुत अधिक बढ़ जायगी ? सन् १८२० की महानभा के एक प्रस्ताव में ‘आत्म-शुद्धि’ शब्द आये थे। उन्नीसवें ने महानभा

इसलिए किसी दूसरे के प्राण लेने का नहीं कोई प्रश्न ही नहीं है । हम अपने प्राणों को इतना मत्ता या फालतू नहीं समझते कि हर किसी न-कुछ चीज के लिए उन्हें गँवा बैठे; किन्तु साथ ही हम अपने प्राणों को स्वयं स्वतन्त्रता से गँवा नहीं समझते, इसलिए यदि हमें हम लाख प्राणों का भी बलिदान करना पड़े तो हम यत्न ही करने को तैयार होंगे और इसपर आकाश में मेरे ईश्वर यही कहेगा—‘शाबाश, मेरे पुत्रो, शाबाश !’ हम अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं । इससे विपरीत आप साम्राज्यवादी प्रकृति के लोग हैं । आपको दूसरों को भयभीत करने की आदत पड़ी हुई है । भूतपूर्व जनरल डायर से जब हार्टर-कमीशन ने पृच्छा, तो जवाब में उसने कहा था—“हां, मैंने यह भयभीतिपन—आतङ्क—ज्ञान-वृक्षकर पैदा किया था ।” मैं यहाँ यह कहना चाहता हूँ कि यह आतङ्क दिखाने की शक्ति अकेले डायर में न थी । हम इस क्रिया को उलटकर स्वतन्त्रता प्राप्ति के प्रयत्न में अपने-आप को बलिदान कर सकते हैं । यदि ब्रिटिश राष्ट्र की इच्छा के रत्नक आप लोग इन अनर्थ में उसे बचा नकें तो इसे बचाना आपका धर्म है ।

प्र०—क्या आपको स्वतन्त्रता देना हमारी भूल न होगी ?

उ०—मेरा खयाल है कि यदि आप किसीको स्वतन्त्रता दें तो आपकी भूल होगी और इसलिए कृपाकर यह स्मरण रखिए कि मैं स्वतन्त्रता की भिक्षा माँगने नहीं आया हूँ, प्रत्युत पिछले वर्ष के कष्ट-सहन के परिणाम-स्वरूप आया हूँ । और इस कष्ट-सहन के अन्त में ऐसा अवसर आया, जिससे हम भारत छोड़कर यहाँ यह देखने के लिए आये हैं कि हमने अपने कष्ट-सहन द्वारा अंग्रेजों के मन पर कफ़ी असर

और मेरे लिए इसका यह अर्थ नहीं कि अँग्रेज़ नौकरों की जगह भारतीय नौकरों द्वारा शासनकार्य चलाया जाय । मेरे मत से पूर्ण स्वतंत्रता का अर्थ है राष्ट्रीय सरकार ।

प्र०—अँग्रेज़ी फ़ौज रखने के साथ आप पूर्ण स्वतंत्रता का मेल किस तरह मिलाते हैं ?

उ०—अँग्रेज़ सेना भारत में रह सकती है और यह निर्भर है दोनों साम्भेदारों की परस्पर की योजना पर । इससे एक भयाहित समय तक भारत का हित होगा, क्योंकि भारत को नपुंसक बना दिया गया है, और अँग्रेज़ सेना अथवा अधिकारियों का एक अंश राष्ट्रीय सरकार की नौकरी में रखा जाना ज़रूरी है । मैं साम्भेदारी की हिमायत करूँगा, और फिर भी इस सेना के रखे जाने की भी हिमायत करूँगा ।

प्र०—स्वतंत्र भारत की बात करते हुए आप वाइसराय की कल्पना करते हैं या नहीं ?

उ०—वाइसराय रहेगा या नहीं, यह प्रश्न दोनों दलों को मिलकर तय करने का है । अपनी ओर से तो मैं वाइसराय के रखे जाने की कल्पना नहीं करता । किन्तु भारत में एक ब्रिटिश एजेण्ट के रखे जाने की कल्पना मैं कर सकता हूँ, क्योंकि वहाँ अँग्रेज़ों ने कई हित-सम्बन्ध स्थापित किये हैं, जिन्हें मैं कष्ट नहीं कहना चाहता, इसलिए इन हित-सम्बन्धों की हिमायत करने के लिए ब्रिटिश एजेण्ट की आवश्यकता होगी, और जब कि वहाँ अँग्रेज़-सैनिकों और अफ़सरों की सेना होगी, तब मैं यह नहीं कह सकता कि नहीं, वहाँ ब्रिटिश एजेण्ट नहीं रह सकता । और नरेशों का भी प्रश्न है: मैं इनका निश्चय नहीं कर सकता कि ये

भारत की तरह यहाँ भी गोर्धीजी का एक-एक कम केश के लिए अर्पित है । और इनके जितना परिश्रम बढ़ावित्, कोई भी नहीं करता । उनके लीचीयों घरे के विवरण इस प्रकार है:-

रात के १ बजे	किंगमली-हॉल पहुँचना
„ १-४५	यज्ञार्थ १६० तार मृत याचना
„ १-५०	टापरी निगमना
„ २ से ३-४५	सोना
„ ३-४५ से ५	उठकर प्रार्थना करना
सुबह ५ से ६	सोना
„ ६ से ७	घूमना और घूमते हुए बातचीत
„ ७ से ८	प्रातःकर्म और स्नान
„ ८ से ८-३०	पहला खाना
„ ८-३० से ९-१५	किंगल्ली हॉल से नाइट्सब्रिज
„ ९-१५ से १०-४५	एक पत्रकार, एक कलाकार, एक सिख प्रतिनिधि और एक व्यापारी के साथ बातचीत
„ १०-४५ से ११	नेएट जेम्स को जाने में
„ ११ से १	नेएट जेम्स में
„ १ से २-४५	अमेरिकियों के भोज में
„ ३ से ५-३०	मुसलमानों के साथ
„ ५-३० से ७	भारत मन्त्री के साथ
„ ७ से ७-३०	प्रार्थना और मन्थ्या के खाने के लिए घर जाना

मेरे खयाल में वस्तुस्थिति का यही ठीक वर्णन है । गोलमेज़-परि-
पद में उन्होंने यह बात अच्छी तरह स्पष्ट की थी । संघ-विधायक-समिति
में यही अदालत की चर्चा में उन्होंने इस प्रश्न को पूरा-पूरा स्पष्ट कर
दिया । उन्होंने चेतावनी दी कि अब उस पुराने रास्ते को छोड़ दीजिए—
हमेशा राष्ट्र की भाषा और जैसा कि आज हो रहा है भारत बड़ी-बड़ी
तनख्वाहें दे और उसके शरीर लोग भूलों मरें—इस प्रकार के विचार
छोड़ दीजिए । नाम कैसा भी अच्छा क्यों न हो, महासभा ऐसी किन्हीं
व्यवस्था से किसी प्रकार का भी सम्बन्ध नहीं रख सकती, जिसमें किसी
भी रूप में और किसी भी प्रकार से ब्रिटिश क़ब्ज़ा और ब्रिटिश आधिपत्य
को मान लिया गया हो । यदि आप सचमुच ही कुछ करना चाहते
हैं तो आपको स्वतन्त्र भारत की परिभाषा में विचार करना चाहिए ।
भारत में अपनी स्वतन्त्र अदालत हो, उसमें जो न्यायाधीश हों उन्हें वह
अपनी शक्ति के अनुसार तनख्वाह दे सकें और उसके लोगों की स्वतन्त्रता
की रक्षा के सच्चे साधन हों । यह, जैसा कि लार्ड सैंकी ने कहा,
'महत्त्व का और निर्भीक' भाषण था । इससे वायुमण्डल स्वच्छ होना
ही चाहिए । उससे लोग विचार करने लगेंगे; कम-से-कम वे लोग जो
लार्ड सैंकी की तरह ऐसे शक्ति से, जो 'उसे क्या चाहिए जानता है,'
खरी बात सुनना पसन्द करते हैं । इस बीच महासभा और उसके प्रतिनिधि
को बदनाम करने के लिए अवसर-प्रचार-कार्य किया जा रहा है ।
पंडित जवाहरलालजी ने युक्तप्रान्त की स्थिति के वर्णन का एक लम्बा
तार भेजा है । जवाहर में गाँधीजी ने ठीक ही कहा है कि पंडितजी बिना
किसी हिचकिचाहट के परिस्थिति के उपयुक्त जो-कुछ आवश्यक हो कार्य



: ७ :

जहाँ तक हमारे देश का प्रश्न है, सरकार में परिवर्तन हो जाने से, हमारे लाभ-हानि में कोई अन्तर नहीं पड़ता । हमें यह न भूल जाना चाहिए कि भारत के इतिहास में कभी न सुने गये चुनाव का असर घृणित-से-घृणित अत्याचार—लियों पर लाठियों के प्रहार तक—मज़दूर सरकार के शासन में ही हो चुके हैं । अनुदार दल के शासन में इससे बदतर और क्या हो सकता है ? क्या गोली-बारूद का खुलकर प्रयोग होगा ? लाठियों के कायर-प्रहार से तो यह कहीं अधिक स्वच्छ और सीधा मार्ग होगा ।

पार्लमेंट के इस भयभीतपने के चुनाव अथवा एक महिला के शब्दों में, 'सबसे पहले हिफाज़त' (Safety First) के चुनाव और इंग्लैंड तथा यूरोप के आर्थिक संकट का कुछ विशेष अर्थ है, जिसे सर विलियम लेटन ने सुन्दर शब्दों में इस प्रकार रखा है—“किसी भी देनदार या ऋणी राष्ट्र के लिए अब यह सम्भव नहीं रह गया है कि वह अपने ही प्रयत्न से कर्ज़ की अदायगी कर सके । लेनदार देशों को यह निश्चय करना चाहिए कि वे अपना लेना माल के रूप में लेने के लिए तैयार हैं, अथवा कर्ज़ की रकम घटाना अधिक पसन्द करते हैं । यदि प्रत्येक राष्ट्र केवल आया तक

एक अँग्रेज विद्यार्थी ने पूछा—“आप शराब पीनेवालों के प्रति इतने अनुदार क्यों हैं ?”

उ०—“इसलिए कि इस अभिशाप के अन्तर से पीड़ित लोगों के प्रति मैं उदार हूँ ।”

कई लोगों को इस बात का आश्चर्य है कि वे इतने विचित्र कामों में सुबह से लेकर आधी-रात तक अपने दिमाग को आवेश से मुक्त रखकर अपने-आपको किस प्रकार प्रवृत्त रख सकते हैं । श्रीमती यूस्टेस माइल्स ने पूछा—“क्या कभी आपको चिड़चिड़ापन सूझता है ?” गांधीजी ने उत्तर दिया—“मेरी पत्नी से पूछो । वह तुम्हें बतलायगी कि दुनिया के साथ तो मेरा बर्ताव बड़ा अच्छा रहता है किन्तु उसके साथ नहीं ।” इस विनोदपूर्ण उत्तर को सराहते हुए श्रीमती माइल्स ने कहा—“मेरे पति तो मेरे साथ बड़ा अच्छा बर्ताव करते हैं ।”

प्रत्युत्तर में गांधीजी ने कहा—“तब मेरा विश्वास है कि श्री माइल्स ने तुम्हें गहरी रिसवत दी है ।”

प्र०—“क्या चरखा मध्ययुग का औज़ार नहीं है ?”

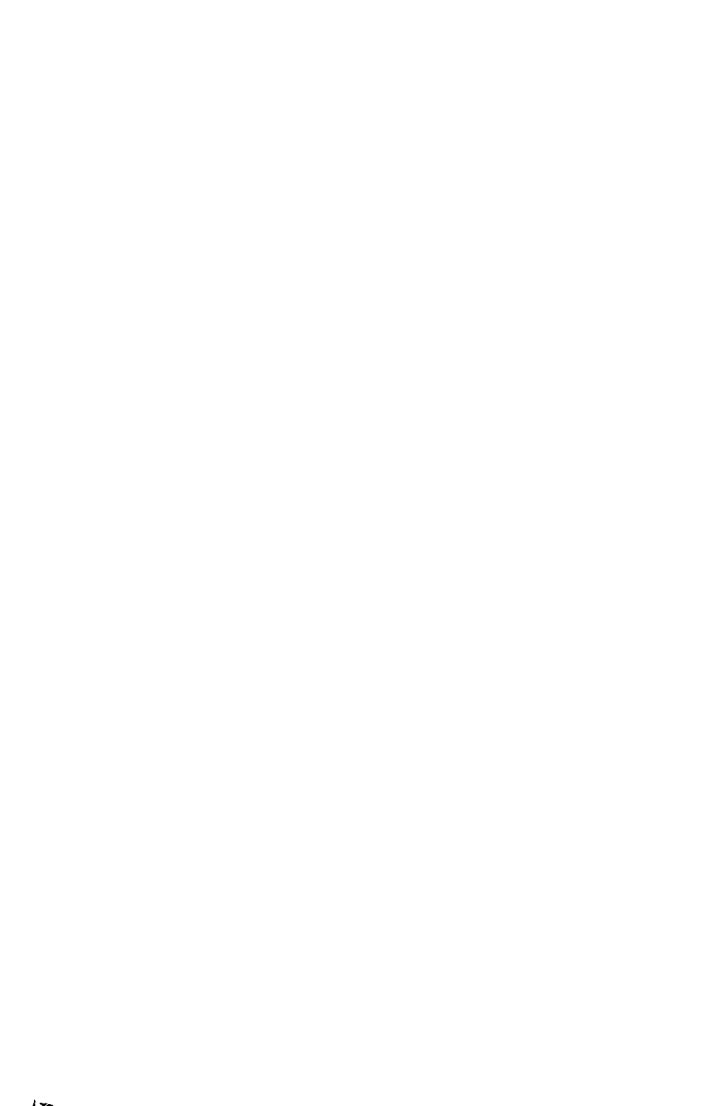
उ०—“मध्ययुग में हम बहुत सी ऐसी बातें करते थे, जो सर्वथा बुद्धिमानीपूर्ण थीं । किन्तु यदि हममें से अधिकांश ने उन्हें छोड़ दिया तो मुझपर मेरी बुद्धिमत्ता का आरोप क्यों करते हो ? यह औज़ार कितने ही मध्ययुग का क्यों न हो, किन्तु अपने दृष्टि ग्रामवातियों की आय में इसके द्वारा ५० प्रतिशत वृद्धि करते हुए मुझे ज़रा भी लज्जा प्रतीत नहीं होती । महायुद्ध के समय आप लोगों ने आलू की खेती की और लिस्सिम-

हैं, और इसलिए यदि सरकार यह कहे कि हमारे गले में बांधी हुई ज़ज़ीर को वह बाँधी ही रखेगी, तो मेरा कहना है कि हम एकसाथ एक ही प्रहार से इस ज़ज़ीर और अनेक्य दोनों के ही टुकड़े-टुकड़े कर डालेंगे।" इसके बाद कामनवेल्थ आफ इण्डिया लोग के स्वागत के अवसर पर उन्होंने कहा :—

“नये अच्छा मार्ग तो यह है कि अंग्रेज़ लोग भारत से अलग हो जायें। जिस तरह इंग्लैंड कर रहा है, उसी तरह भारत को अपने घर की व्यवस्था या कुव्यवस्था करने दे। किन्तु भारत में अंग्रेज़ जेलर की तरह बनकर भारतवासियों को नेकचलनी के नियम सिखाते हैं, और भारत एक विलुप्त जेलखाना बन गया है। अच्छा हम अपना हिसाब बतावेंगे और आप को भी अपना हिसाब बनाना होगा। आपके लिए नये अच्छे बात तो यह है कि आप इन अक्रामक और अस्वाभाविक सम्बन्ध का अन्त कर दें। यदि ईश्वर की ऐसी ही इच्छा हुई, तो हम आपके अन्तरेखित हाथों में स्वतन्त्रता धरना केने मैंने खयाल किया था कि हम लोगों ने काफी कुछ सहन किया है, किन्तु मैं डरता हूँ कि हमारा सहन सहन करने का अधिक और वास्तविक नहीं है, हमसे कि हमका अन्त हो सके, इसलिए हमें भारत छोड़कर अपने देश वापसी में लगे हुए हैं। अच्छा आपको हम अंग्रेज-परोक्ष में से निकलने के लिए कहना होगा। अक्रामक और अक्रान्त के घटनाओं में हमारे लौटने के लिए अक्रामक सम्बन्ध का तरह बताना बेसबुद्ध है किन्तु हमें और अपने और अपने अन्त के अन्त का बताना करना हमें अपने पर बेहतर ज्ञान है, किन्तु मैं हम शय में अपना

निश्चय तो कर सकें। परन्तु यह तो ब्रिटेन की राजनीति में ही नहीं है; वह तो जो-कुछ करता है सब वृथा फट्टायाक गुमान-फिराव के साथ ही करता है।

शायद कोई कहेंगे कि मुख्य घटना बर्किंगम (सम्राट के) राजप्रासाद के स्वागत की थी, परन्तु सम्राट जमा करें, मैं तो यह नहीं कहूँगा। क्या सम्राट् जार्ज इन स्वागतों में कोई सार है? क्या सम्राट और सम्राज्ञी लोगों से दिल खोलकर मिलते हैं? क्या इस बातचीत में कुछ निश्चय करते हैं या करने की सामर्थ्य उनमें है भी? क्या यह एक मूक नाटक-भाज नहीं था? परन्तु अब तो लोग कहेंगे कि गांधीजी भी तो वहाँ गये थे। यदि यह सब निरर्थक ही था तो वे वहाँ क्यों गये? क्या मैं गांधीजी की मानसिक दशा पर यहाँ थोड़ा प्रकाश डालूँ? एक मित्रों की सभा में गांधीजी ने कहा था, मैं तो यहाँ बड़ी कठिन अवस्था में हूँ। मैं यहाँ इस राष्ट्र का मेहमान होकर आया हूँ, अपना राष्ट्र का चुना हुआ प्रातिनिधि होकर नहीं। अतः मुझे बहुत समझकर चलना चाहिए और आप नहीं जानते कि मैं कितना समझकर चलता हूँ। आप समझेंगे कि अत्यन्तव्यक्तमान में प्रधान-मन्त्रों के धमकी देनेवाले भाषण को मैंने स्तब्ध किया। मैं तो वहाँ उसका विरोध करना, परन्तु चुप रहा और घर आकर एक हलका विरोध-सूचक पत्र लिख भेजा। अब इन सनाह एक और नैतिक समस्या उत्पन्न हो गई है। सम्राट् के स्वागत का निमन्त्रण मुझे मिला है। भारत में होनेवाला घटनाओं ने मुझे इतना लुब्ध और दुःखी बना दिया है कि मैं मन नहीं चाहता कि मैं इस स्वागत में सम्मिलित होऊँ और यदि मैं स्वच्छन्द रूप से





रेल' ने आज यह पोस्टर अपवा विशापन प्रकाशित किया है—“गांधीजी को घर वापस भेज दो।”

आज एक प्रमुख सार्वजनिक व्यक्ति के पुत्र ने गांधीजी से पूछा—
 “तब भारत के भविष्य में क्या है ? क्या परिपक्व का अतृप्त फल होना निश्चित है ?” उत्तर में गांधीजी ने कहा—“ऐसा कहना कृतघ्नता होगी। किन्तु मुझे सफलता की आशा बहुत कम है।” फिर पूछा गया—“क्या आप नहीं समझते कि सरकार ने इस विषय पर चर्चा करने दी, इसलिए वह अब कुछ करेगी ? क्या सरकार में परिवर्तन हो जाने से कुछ अन्तर पड़ेगा ?” गांधीजी ने तुरन्त ही बिना किसी सल्लोच के स्थिति का सार बताते और दोनों ही प्रश्नों का एक-साथ जवाब देते हुए कहा—“अवश्य ही मैंने तो उसमें अधिक अच्छाई की आशा की थी; किन्तु मुझे यह प्रतीत नहीं होता कि उसने सत्ता हमारे हाथ में सौंप देने का निश्चय कर लिया है। रहा दोनों दलों (मजदूर और अनुदार) के सम्बन्ध में, तो मेरा खयाल है कि भारत के लिए तो दोनों में इतना ही अन्तर है जितना कि ‘आधा दर्जन और छ’ कहने में।” सब पूछा जाय तो मुझे इस बात की ख़ुशी है कि अनुदार-दल का इतना आसक बहुमति के साथ मुझे निषेधना है क्योंकि मैं यहाँ में कुछ चुनकर नहीं ले जाना चाहता, मुझे तो इतनी बड़ा और अच्छा दल चाहिए, जिन गरीब आदमी आमानों से देख और सम्मान लें, और इमानेदारी यह अच्छा है कि मुझे एक मजदूर दल के साथ रहना है और जो मैं चाहता हूँ वह उस मजदूर दल में जात लेना है। मुझे तो स्थापना चाहिए चाहिए मुझे सम्बन्ध तोड़ना नहीं उसे बदल देना है। भारत और इंग्लैंड के बीच सम्मान

प्र०—“क्या आप यह नहीं मानते कि अपनी आर्थिक और सामाजिक मुक्ति के लिए किसानों और मज़दूरों का वर्ग युद्ध जारी करना न्यायसंगत है, जिससे कि वे हमेशा के लिए समाज के परोपजीवी वर्गों को सहायता पहुँचाने के बोझ से मुक्त हो सकते हैं ?”

उ०—“नहीं। उनकी तरफ़ से मैं त्वयं एक क्रान्ति कर रहा हूँ। हाँ, वह है अहिंसात्मक क्रान्ति।”

प्र०—“युक्तप्रान्त में भूमि कर कम कराने के अपने आन्दोलन के द्वारा आप किसानों की स्थिति में कुछ सुधार भले ही करें, पर उस पद्धति के मूल पर आप आघात नहीं करते ?”

उ०—“हाँ। किन्तु सभी बातें एकसाथ हो भी तो नहीं सकती।”

प्र०—“तब आप उनमें संरक्षकता का भाव कैसे पैदा करेंगे ? क्या उन्हें समझा बुझाकर ?”

उ०—“कोई शब्दों से समझाकर नहीं, बल्कि एकाग्र होकर अपने साधनों का व्यवहार करना। कई लोगों ने मुझे अपने समय का सबसे बड़ा क्रान्तिकारी कहा है। सम्भव है कि ऐसा न हो, किन्तु मैं स्वयं भी अपने को क्रान्तिकारी मानता हूँ। अहिंसात्मक क्रान्तिकारी अमहयोग मेरा साधन है और तबतक जब तक मैं इस धर्म से सख्त नहीं कर सकूँगा जबतक कि मुझे तत्सम्बन्धित व्यक्तियों का स्वच्छन्दता या बलात्कृत प्रयोग न प्राप्त हो।”

प्र०—“‘पूजायाच्य’ को संरक्षक बनाया। यही उसी क्रांति के लक्ष्य का क्या एक है और आप वह क्या शब्दों में संरक्षक करेंगे ?”





पर कठोर आघात कर चुके हैं, किन्तु फिर भी उनका हृदय शान्त, विन्तनशील जीवन के लिए छटपटाता है। 'स्वराज्य' का मूल समझ लेने के लिए वह बहुत उत्सुक थे, और जब गांधीजी ने कहा कि उसका मूल आत्मशुद्धि और अत्मबलिदान है, तो वह अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने कहा—“यही सब धर्मों का सार है।” वह 'आधुनिक विज्ञान के विनाश साधनों' से उफता गये हैं और वह यह अनुभव करते हैं कि हमारे जीवन के प्रत्येक व्यवहार में अर्थ और काम की दृष्टि होना ही हमारी सब आपदाओं अथवा रोगों की जड़ है। भारत के आंदोलन के सम्बन्ध में उनके हृदय में गहरी-से-गहरी सहानुभूति है। यह कहने में ज़रा भी अतिशयोक्ति नहीं कि गांधीजीके साथका उनका परिचय आत्माके साथ आत्मा का ही परिचय था।

पत्रकारों के महारथी श्री स्कॉट की मुलाकात तो स्वयं गांधीजी के शब्दों में एक तीर्थयात्रा की तरह थी। ५० वर्ष तक 'मेञ्चेस्टर गार्जियन

श्री स्कॉट

के सम्पादकपद का उद्योग करके ८३ वर्ष की अवस्था में सन् १९०६ में इस्तीफा दे दिए। इस समय उनकी

ने कहा—“हाँ, यह एकता, अंग्रेज़ी शासन ने हमारे सिर पर थोपी है। नतीजा यह हुआ है, जैसा कि हम इस समय देख रहे हैं, कि आन-वान का प्रसंग आने पर असंख्य विनाशक शक्तियाँ उद्भूत हो जाती हैं। मेरी इस बात से श्री मैकडोनल्ड चिड़ गये थे; किन्तु मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि यदि परिपक्व में भारत के चुने हुए सच्चे प्रतिनिधि होते तो साम्प्रदायिक प्रश्नों का निपटारा होने में कुछ भी कठिनाई न होती। अभी तो, जैसा कि सर अलीइनाम ने कहा था, प्रत्येक प्रतिनिधि प्रधान-मन्त्री की इच्छानुसार यहाँ आ सके हैं। और मान लीजिए कि राष्ट्र ने चुनकर भी इन्हीं व्यक्तियों को भेजा होता, तो आज उन्होंने जो ढंग अख्तियार कर रक्खा है, उस समय उन्हें इतने अधिक जिम्मेदारी का तरीका अख्तियार करना पड़ता। सच बात तो यह है कि छोटी-छोटी हास्यास्पद अल्प-संख्यक जातियों में से व्यक्ति पसन्द कर लिये गये हैं, वे उन जातियों के प्रान्ताधि कहे जाते हैं, और वे चाहे जितने रोड़े अटक सके हैं ”

किन्तु सब दस्तावेजों में यह न दे सकूँगा और सच तो यह है कि, जैसा कि पहले कह चुका हूँ, जो स्कॉट के नामने उन्होंने दस्तावेजों के तौर पर कुछ रखा है, वह— उन्होंने अन्तः-आ में राष्ट्रपति मन्त्रालय का विचार किया, ‘मिठास और वेज में पला सुन्दर बालों आखोंवाले’ ग्लेडस्टन और सदैव के लिए इन्हें हम पर अपना राजनीतिकता का छाप बिठा देनेवाले कैम्बेज वेनरमेन जैसे व्यक्तियों का, और दूसरा अन्तः-आ का विधान बनाने समय उन्होंने जो बड़ा हल्का ‘लया’ उसका दाद का और ऐसे बड़े पुरुषों के लिए आदर करा।

उलझे हुए व्यक्ति पागलखानों में पड़े हुए लोगों की तरह हैं। किन्तु आप जो लोग अपने देश की स्वतन्त्रता के लिए किसीको चोट पहुँचाये बिना अपने प्राणों की आहुतियाँ देते हैं, उनका अध्ययन करें, उच्च-कोटि के मनुष्य का, आत्मा की पुकार और प्रेम-धर्म का अनुसरण करने वाले व्यक्तियों का अध्ययन करें, जिससे आप जब बड़े हों, तब अपनी विरासत को सुधार सकें। आपका राष्ट्र हम पर शासन करता है, इसमें आपके लिए कोई गर्व की बात नहीं हो सकती। ऐसा कभी नहीं हुआ कि गुलाम को बाँधनेवाला स्वयं कभी न बाँधा हो, और दूसरे राष्ट्र को गुलामी में रखनेवाला राष्ट्र स्वयं गुलाम बने बिना नहीं रहा। इङ्गलैंड और भारत के बीच आज जो सम्बन्ध है, वह अत्यन्त पापपूर्ण सम्बन्ध है, अस्वाभाविक सम्बन्ध है; और मैं अपने काम में जो आपका शुभाशीर्वाद चाहता हूँ वह इसलिए कि स्वतन्त्रता प्राप्त करने का हमारा स्वाभाविक हक है, वह हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, और हमने जो तपस्या की है और जो कष्ट भरे हैं उनके कारण हमारा यह अधिकार दुगुना हो गया है। मैं चाहता हूँ कि आप जब बड़े हों, तब अपने राष्ट्र को लुटेरेपन के पाप में मग्न करके उसका वर्णन में अद्भुत बृद्ध करें और इस प्रकार मानवजाति के प्रभुत्व में अक्षय्य योगदान दें।

इसका प्रश्न यह था कि क्या हमारे देश भारत के चले जायेंगे, तो लुटेरे राजाओं के सामान भाग्य के कारण ही राजाओं के इन नवयुवकों को 'विकास' गुलामों के रूप में देखेंगे और वे हमें काट मर नहीं दें, और यदि वे दुःखी हों तो हमें उनका अपेक्षा करने में मरम्मत करना पड़ेगा। सामान्य रूप से हमें यह जानना चाहिए कि हमारे देश के लोग, जो हमारे

ने राज् मंगी । भारत का गौरव औंग्रेजों को भारत में निकाल देने में नहीं, प्रत्युत उनका हृदय परिवर्तन कर उन्हें लुटेरे में भिन्न बनने की आवश्यकता के समझ भारत के सम्मान की रक्षा करने के लिए भी करने में होगा ।

इस मुलाकाद का निवारियों के हृदय पर क्या अगर हुआ, रक्त कुछ पता नहीं । किन्तु यह मेरा विश्वास है कि इस मुलाकात से उनकी बुद्धि पर जो आघात पहुँचा है, उसे ये जल्दी भूल नहीं सकते । मुन-मुन कर प्राप्त किये हुए ज्ञान की अपेक्षा गजीव व्यक्ति का संसर्ग अनन्तगुण बहुमूल्य है और प्रेमपूर्ण सम्मिलन के स्पष्ट प्रकाश के आगे गलतफहमी का कोहरा अस्मर हट जाता है । तत्काल हृदय-परिवर्तन का एक उदाहरण यहाँ देता हूँ । मीरा बहन की भारतीय पोशाक और गाँधीजी के प्रति उनकी शिष्यवृत्ति देखकर वहाँ की कुछ महिलाओं के हृदयों को गहरी चोट पहुँची । ये बहनें इस बात को मानने के लिए तैयार ही नहीं कि मीरा बहन अंग्रेज हैं । जब मीरा बहन ने कहा कि वे केवल एडमिरल स्लेड की पुत्री ही नहीं, वरन् उनके एक निकट-सम्बन्धी डा० एडमण्ड बार ईटन के प्रसिद्ध विद्यार्थी थे और कई वर्षों तक ईटन के हेडमास्टर रह चुके हैं, तो इसपर कुछ कटु आलोचना भी हुई, किन्तु इससे मीरा बहन जरा भी विचलित एवम् दुःखित न हुई । उन्होंने हँसते-हँसते सब प्रश्नों के उत्तर दिये । परिणाम यह हुआ कि दो घण्टे बाद इनसे खुले दिल से बातें कर चुकने पर प्रश्न करनेवाली उनकी मित्र बन गई ।

लन्दन में जब एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सभा में गाँधीजी ने कहा कि भारत में अंग्रेजों के शासन में, उनके पहले जितना था, उससे भी कम

अज्ञान है, तब कई लोग इसे एकदम अतिशयोक्ति समझकर उनके इस कथन से दुःखित हो उठते थे। किन्तु यदि कोई व्यक्ति ५०० वर्ष

पुराने ईटन का खयाल करे, आर्कटफोर्ड के
२१ कालेजों में कम-से-कम तीन तो सन्
१८६१ के समय के पुराने हैं, और बेलियल,

मर्टन और यूनिवर्सिटी कालेज ये तीनों कालेज सबसे पुराने होने के विषय में तर्जुमा करते हैं यह देखे, और दूसरी ओर अनेक राष्ट्रीय प्राचीनतम संस्कृति का अभिमान रखनेवाले भारत में ईटन अथवा बेलियल जैसी पुरानी शिक्षा-संस्था की खोज का व्यर्थ प्रयत्न करे, तो कदाचित् वह गाँधीजी के उक्त कथन की वास्तविकता की कल्पना कर सके। अंग्रेजी शासन के पहले भारत में एक समय ऐसा था; जब कि भारत के सब प्राचीन नगरों में विद्या के धान और गाँव-गाँव में पाठशालाएँ थीं; ब्रह्मदेश में प्रत्येक गाँव में बौद्ध साधुओं के विहार के साथ एक-एक पाठशाला थी। इस बात का आश्चर्य है कि अब वे पाठशालाएँ कहाँ गयीं। यदि ये पाठशालाएँ रहने दी गईं होतीं, और सावधानी के साथ उनका पोषण हुआ होता तो हमारे यहाँ भी ईटन, बेलियल और मर्टन जैसी शिक्षा-संस्थाएँ होतीं। इन प्राचीन संस्थाओं का निरीक्षण करते समय किसी भी भारतीय को इतने ही प्राचीन इतिहासवालों अपनी संस्थाओं का स्मरण हुए बिना बर्तन रह सकता।

: ३ :

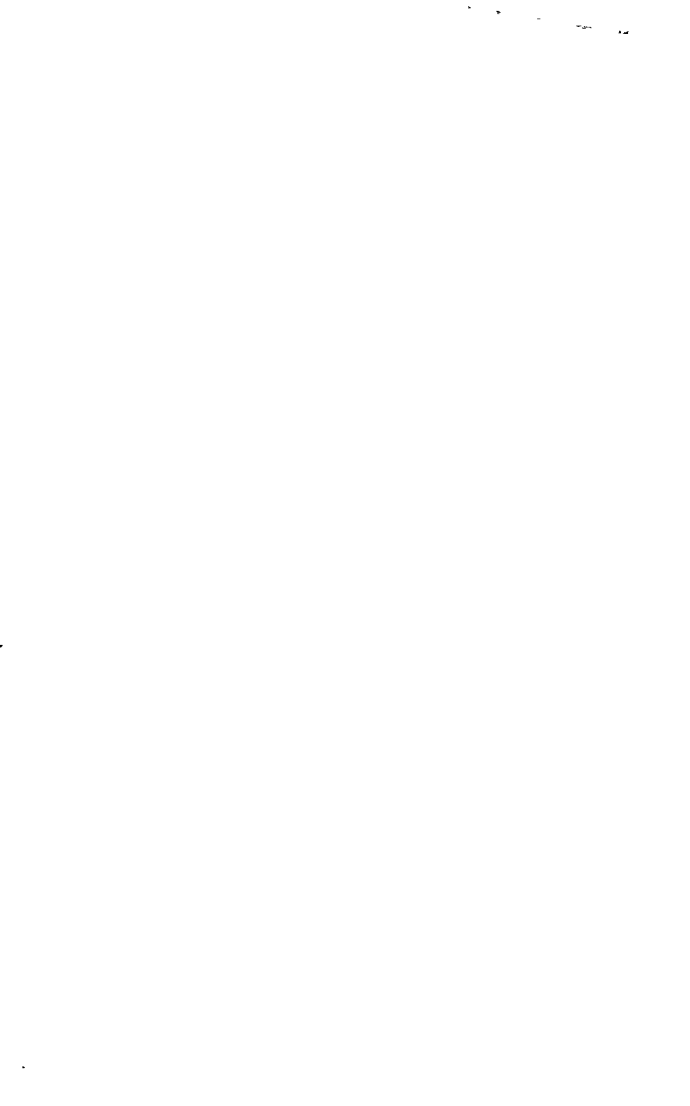
आक्सफोर्ड की मुलाक़ात एक महत्त्व की घटना थी, क्योंकि वहाँ सर्वथा विशुद्ध प्रेम, और भारतीय प्रश्न को समझने और उसकी तह तक पहुँचने की सच्ची और हार्दिक इच्छा थी। वेलियत आक्सफोर्ड कालेज के अध्यापक डा० लिएड्से जब भारत में आये थे, तब उन्होंने अपने घर में कुछ दिन शांतिपूर्वक बिताने के लिए गाँधीजी को निमन्त्रण दिया था। उन्होंने अपना वह निमन्त्रण यहाँ फिर दुहराया। इसमें उनका उद्देश्य गाँधीजी को एक दिन शान्ति पहुँचाना तो था ही, साथ ही इससे भी अधिक वे आक्सफोर्ड के विद्वद्-समुदाय से उनका परिचय करा देना चाहते थे। उसमें शासक जाति के होने का गर्व छू भी नहीं गया है, (वह स्कॉच हैं) और वह मानते हैं कि स्वतन्त्रता भारत का जन्मसिद्ध अधिकार है, इसलिए भारतीय प्रश्न की ओर मित्रों की दिलचस्पी कराने में उन्हें ज़रा भी कटिनाई नहीं हुई। अनेक सभाएँ और सम्भाषण हुए। श्री लिएड्से के घर पर ही चालीसेक खास-खास मित्रों की एक सभा हुई और पढ़े लिखे विद्वानों की तीन सभाएँ अन्यत्र हुई। श्री टॉमसन ने, जिन्होंने कि 'अदर साइड आफ़ दि मेडल' (दाल का दूसरा कख) नामक पुस्तक लिखी है और जिन्होंने 'एटोनमेण्ट' (प्रायाश्चित)

नामक पुस्तक में इंग्लैंड को भारत के प्रति किये गये पापों का प्रायश्चित्त करते हुए चित्रित किया है, डा० गिलबर्ट मरे, डा० गिलबर्ट स्लेटर, प्रो० कुपलैंड और डा० दत्त जैसे मित्रों को गांधीजी के साथ शान्ति-पूर्वक लम्बी बातचीत करने के लिए निमन्त्रित किया था। आक्सफ़ोर्ड के अग्रगण्य अध्यापकों की भी ऐसी ही सभा हुई, और उसके बाद रेले-क्लब के सभ्यों की सभा हुई। इस क्लब में अधिकतर उपनिवेशों के विद्यार्थी हैं, जिनमें कई सेसिल रहोड्स की छात्रवृत्ति पानेवाले और प्रायः सभी साम्राज्य के सूक्ष्म प्रश्नों का अध्ययन करनेवाले हैं। सबसे पीछे, किन्तु महत्व में किसीसे कम नहीं, भारतीय विद्यार्थियों की एक 'मजलिस' की व्यवस्था में एक सभा हुई, जिसमें कुछ अँग्रेज विद्यार्थी भी आमन्त्रित किये गये थे।

श्री टॉमसन के घर पर हुई बातचीत में अनेक विषय छिड़े और कई मौलिक सिद्धान्तों पर चर्चा हुई। पाठकों को कदाचित्त याद होगा कि श्री गिलबर्ट मरे ने करीब तेरह वर्ष हुए 'हिर्वर्ट जनरल' नामक पत्र में पशुबल के विरुद्ध आत्मबल की अत्यन्त प्रशंसा करते हुए एक लेख लिखा था। उन्हें हमारे आन्दोलन में अहिंसक क्रान्ति और राष्ट्रवाद अत्यन्त भयङ्कर रूप धारण करते हुए दिखाई दिया और इससे वे बड़े परेशान दिखाई दिये। उन्होंने कहा—“आज मेरा आपके साथ श्री विन्स्टन चर्चिल से भी अधिक मतभेद है।” उत्तर में गांधीजी ने कहा—“आप संसार में होते हुए संस्कृति के नाश को रोकने के लिए जुदे-जुदे राष्ट्रों के बीच सहयोग चाहते हैं। मैं भी यही चाहता हूँ। किन्तु सहयोग तभी हो सकता है, जब सहयोग करने योग्य स्वतन्त्र राष्ट्र हो। यदि मुझे

उदाहरण पैदा कर देने की है। मैं ऐसा स्वप्न देख रहा हूँ कि मेरा देश अहिंसा द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त करेगा और मैं अगणित बार संसार के सामने यह बात दुहरा देना चाहता हूँ कि अहिंसा को छोड़कर मैं अपने देश की स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं करूँगा। मेरा अहिंसा के साथ का विबाह इतना अविच्छिन्न है कि मैं अपनी इस स्थिति से विलग होने का अपेक्षा आत्महत्या कर लेना पसन्द करूँगा। यहाँ मैंने सत्य का उल्लेख नहीं किया, वह केवल इसलिए कि सत्य अहिंसा के सिवा दूसरी तरह प्रकट हो ही नहीं सकता। इसलिए यदि आप यह कल्पना स्वीकार कर लें तो मेरी स्थिति सुरक्षित है।”

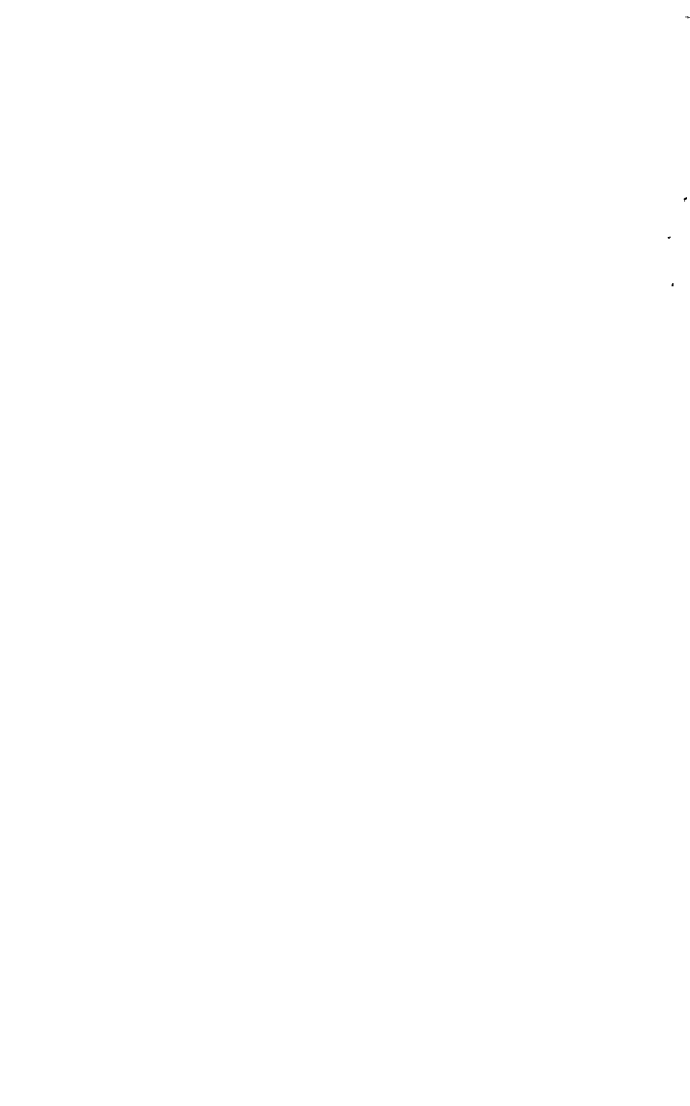
जैसा कि बातचीत से मालूम हुआ सर गिलबर्ट की आपत्ति अहिंसा के सिद्धान्त के विरुद्ध नहीं, बल्कि समाचार-पत्रों में वर्णित उसके कई प्रयोगों के विरुद्ध थी। बोयकोट (बहिष्कार) की चर्चा करते हुए उनके मन में कर्नल बोयकोट (जिस पर से ‘बोयकोट’ शब्द प्रचलित हुआ) पर हुए अत्याचार का, जिसके परिणाम में उनके क्लर्क को आत्महत्या करनी पड़ी, खयाल हो रहा था। इसपर जो बहस छिड़ी वह लगभग उकता देने वाली, दुर्बोध तथा तात्त्विक हो उठी। किन्तु अन्त में गांधीजी ने जो बातचीत की उसका सार इस प्रकार है—“आपका यह कहना ठीक हो सकता है कि मुझे अधिक सावधानी से कदम रखना चाहिए; किन्तु यदि आप मूल सिद्धान्त पर आक्षेप करते हों, तो इसके लिए आपको मेरा समाधान करा देना चाहिए। और मैं आपको यह कह देना चाहता हूँ कि यह हो सकता है कि बहिष्कार का राष्ट्रवाद से भी कोई सम्बन्ध न हो। यह विशुद्ध सुधार का प्रश्न भी हो सकता है,



सम्मान करने, तो वह हम कब तक कर सकेंगे यह कौन कह सकता है ? मैं नहीं चाहता कि इसका निधाय आप करें । जान में अथवा अनजान में आप अपने को विभूतता मान बैठे हैं । मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि एक क्षण के लिए आप हम मिहामन से नीचे उतरें । हमें हमारे भरोसे पर छोड़ दीजिए । आज एक छोटे-से राष्ट्र के पैरों के नीचे सारी मानव-जानि कुचली जा रही है, इससे भी बदतर कुछ और हो सकता है, इसकी मैं कल्पना ही नहीं कर सकता ।

“और आपके अपने सौलजरो या सैनिकों के प्राणों के लिए जिम्मेदार रहने की यह बात क्या है ? मैं भारत की सेना में भरती होने के लिए सब विदेशियों के नाम एक नोटिक प्रकाशित करूँगा और उसपर यदि कुछ अंग्रेज भरती होना चाहेंगे तो क्या आप उन्हें रोक देंगे ? यदि वे भरती होंगे, तो जिस तरह किसी भी दूसरे देश की सरकार की नौकरी करने पर वह उनके प्राणों के लिए उत्तरदायी रहती है, उसी तरह हम भी रहेंगे । इसमें कोई सन्देह नहीं कि सेना का नियन्त्रण ही त्वराज्य की कुञ्जी है ।

“सर्व-सम्मत माँग के सम्बन्ध में, जैसा कि मैं अवतक कई बार कह चुका हूँ, मैं यही कहूँगा, कि आपके अपनी पसन्द के बुलाये हुए लोगों से आप सर्व-सम्मत माँग की आशा नहीं कर सकते । हमारा रणक्षेत्र मेरा यह दावा है कि महासभा सबसे अधिक भारतीयों की प्रतिनिधि है । ब्रिटिश-मन्त्री इस बात को जानते हैं । यदि वे इस बात को नहीं जानते, तो मैं अपने देश को वापस जाऊँगा, और जितना मैं से-अधिक सम्भव हो सकता है लोकमत संग्रह करूँगा । हमने जीव



“आप पूछेंगे, कि तब उनके प्रतिनिधि डा० अम्बेडकर किस तरह उनके लिए पृथक् निर्वाचक-मण्डल मांगते हैं? डा० अम्बेडकर के लिए मेरे हृदय में गहरा सम्मान है। उन्हें मेरे प्रति कटु होने का सब प्रकार से अधिकार है। यह उनका आत्म-संयम है कि वह हमारा तिर नहीं फोड़ डालते। आज वह आशङ्का और सदेह से इतने अधिक घिरे हुए हैं कि उन्हें दूसरी बात कुछ सूझती ही नहीं। वह आज प्रत्येक हिन्दू को अछूतों का पक्षा विरोधी मानते हैं और यह सर्वथा स्वाभाविक है। मेरे प्रारम्भिक दिनों में दक्षिण अफ्रिका में भी ठीक ऐसी ही बात हुई थी; वहाँ मैं जहाँ जाता, वहीं गोरे लाग अर्थात् यूरोपियन मेरे पीछे पड़ जाते। डा० अम्बेडकर अपना रोग प्रकट करते हैं, यह सर्वथा स्वाभाविक ही है। किन्तु वह जो पृथक् निर्वाचक-मण्डल चाहते हैं, उससे उनका सामाजिक सुधार न होगा। यह सम्भव है कि इससे उन्हें सत्ता और उच्च-पद मिल जाय; किन्तु इससे अछूतों का कुछ भला न होगा। इतने वर्षों तक उनके साथ रहने और उनके साथ युग में शरीक होने के कारण मैं यह सब बातें आँखों से देख कर सन्न हो रहा हूँ।”

यह बातें सुनकर मैंने कहा कि मैंने आपकी इस बात से बहुत तरह के प्रश्न पूछे हैं, जिनके उत्तर आपने मुझे दिये हैं। मैंने आपकी बातों से बहुत कुछ सीखा है, और मैंने आपकी बातों से बहुत कुछ सीखा है। मैंने आपकी बातों से बहुत कुछ सीखा है, और मैंने आपकी बातों से बहुत कुछ सीखा है।

मैंने आपकी बातों से बहुत कुछ सीखा है, और मैंने आपकी बातों से बहुत कुछ सीखा है।

एक बात मैंने आपकी बातों से सीखी है, कि मैंने आपकी बातों से बहुत कुछ सीखा है, और मैंने आपकी बातों से बहुत कुछ सीखा है। मैंने आपकी बातों से बहुत कुछ सीखा है, और मैंने आपकी बातों से बहुत कुछ सीखा है। मैंने आपकी बातों से बहुत कुछ सीखा है, और मैंने आपकी बातों से बहुत कुछ सीखा है।

लिए कम होती जा रही है, यही कारण है कि प्रतिदिन उसके बेकारों की संख्या में असंख्य वृद्धि हो रही है। भारत का बहिष्कार तो केवल एक तथैये का दंशमात्र था। और जब इंग्लैंड का यह हाल है, तो भारत-जैसा विशाल देश उद्योगवादी बनकर लाभ उठाने की आशा नहीं कर सकता। वास्तव में यदि भारत दूसरे राष्ट्रों को लूटने लगे—और यदि वह उद्योगवादी बने तो ऐसा किये बिना उसका छुटकारा नहीं—तो वह दूसरे राष्ट्रों के लिए शाप-रूप और संसार के लिए खतरा बन जायगा। और दूसरे राष्ट्रों को लूटने के लिए मैं भारत को उद्योगवादी बनाने की कल्पना क्यों करूँ ? क्या आप आज की दुःखद स्थिति को नहीं देखते ? हम अपने ३० करोड़ बेकारों के लिए काम तलाश कर सकते हैं, किन्तु इंग्लैंड अपने ३० लाख बेकारों के लिए कोई काम तलाश नहीं कर सकता और आज उसके सामने जो प्रश्न आ खड़ा हुआ है वह उसके बुद्धिमान-से-बुद्धिमान लोगों को परेशान कर रहा है ! उद्योगवाद का भविष्य अन्धकारपूर्ण है। इंग्लैंड को अमेरीका, जापान, फ्रान्स और जर्मनी सफल प्रतियोगी मिले हैं और भारत की मुट्ठी-भर मिलों की भी उसके विरुद्ध प्रतियोगिता है। और जिस तरह भारत में जाग्रति हुई है, उसी तरह दक्षिण-अफ्रिका में भी होगी। उसके पास तो प्राकृतिक खानों और मनुष्यों का विशाल साधन है। बलिष्ठ अंग्रेज़, बलिष्ठ अफ्रिकन जाति के सामने, महज् बौने दिखाई देते हैं। आप कहेंगे कि कुछ भी हो वे शरीफ़ जङ्गली हैं। अवश्य ही वे शरीफ़ हैं, किन्तु जङ्गली नहीं और कुछ ही दिनों में पश्चिम के राष्ट्र अपने सस्ते माल की बिक्री के लिए अफ्रिका के द्वार बन्द हुए देखेंगे। और यदि उद्योगवाद का भविष्य पश्चिम में काला

हो तो क्या, वह भारत के लिए उससे भी अधिक काला सिद्ध न होगा ?”

प्र०—“आई० सी० एस० के विषय में आपका क्या मत है ?”

उ०—“आई० सी० एस० इन्डियन सिविल सर्विस नहीं प्रत्युत ई० सी० एस० अर्थात् इंग्लिश सिविल सर्विस है। मैं यह बात यह जानकर आई० सी० एस० कह रहा हूँ कि इसमें कुछ भारतीय भी हैं। जबकि

भारत एक गुलाम देश है, वे इंग्लैंड के हित के सिवा दूसरी बात कर ही नहीं सकते। किन्तु मान लीजिए कि योग्य अंग्रेज भारत की सेवा करना चाहते हैं, तो वे वास्तव में राष्ट्रीय सेवक होंगे। इस समय तो वे आई० सी० एस० नाम धारण कर लुटेरी सरकार की सेवा करते हैं। भारत के स्वतन्त्र होने के बाद अंग्रेज या तो साहसिक वृत्ति से या प्रायश्चित्त करने के लिए भारत में आयेंगे, छोटी तनख्वाहों पर सेवा करेंगे, और असह्य भारी वेतन लेकर इंग्लैंड को भी मातकर देनेवाली फिजूलखर्ची से रहने और इंग्लैंड की आवहवा को भारत में पैदा करने का प्रयत्न कर शरीरों पर बोझरूप होने की अपेक्षा भारत की आवहवा की कठोरता सहन करेंगे। हम उन्हें सम्मानित साधियों की तरह रखेंगे, किन्तु यदि उनकी हमपर हुकूमत चलाने और अपने-आपको उच्चवर्ग का मानने की अन्दर-ही-अन्दर जग-मी भी इच्छा होगी, तो हमें उनकी आवश्यकता नहीं।”

प्र०—“क्या आपका कहना है कि आप स्वतन्त्रता के लिए पूर्णतः योग्य हैं ?”

उ०—“यदि हम योग्य नहीं हैं, तो होने का प्रयत्न करेंगे। किन्तु

प्र०—“किसी राष्ट्र को लूटना और उसके साथ व्यापार करना इन दोनों बातों को आप किस प्रकार भिन्न करेंगे ?”

उ०—“इसकी दो कसौटी हैं—(१) दूसरे राष्ट्र को हमारे माल की आवश्यकता होनी चाहिए । यह माल उसकी इच्छा के विरुद्ध सस्ती कीमत पर हरगिज़ न बेचा जाय । और (२) व्यापार के पीछे नौकाबल न होना चाहिए । और इस सम्बन्ध में यदि मैं आपको बतलाऊँ कि हमारे भारत जैसे राष्ट्रों पर इंग्लैंड ने कितना अत्याचार किया है, और यदि आपको उसका अनुभव हो, तो आप ‘Britania rules the waves’ (ब्रिटेन समुद्र पर शासन करता है) यह गीत ज़रा भी गर्व से न गावें । अंग्रेज़ी पाठ्य पुस्तकों में आज जो बातें गौरव की समझी जाती हैं, वे लज्जा की प्रतीत होने लगेंगी और आपको दूसरे राष्ट्रों का पराजय अथवा अपमान से गर्वित होना छुड़ देना पड़ेगा ।”

प्र०—“आपके मार्ग में साम्प्रदायिक प्रश्न सम्बन्धी अंग्रेजों का बर्ताव किस हद तक विघ्न कर है ।”

उ०—“अधिकांश अथवा यों कहना चाहिए कि आधेआध । जान में अथवा अनजान में, भारत की तरह यहाँ भी कुछ डालकर शासन करने की भेदनीति चल रही है । अंग्रेज अधिकारी कम-कम दल में और कभी दूसरे दल से दोस्ती करते हैं । अवश्य ही यदि मैं अंग्रेज अधिकारी होता तो मैं भी वही करता और अपने शासन को मजबूत करने के लिए आपनी मगड़ों से लाभ उठाता । इन विषय में हमारा जिम्मेदारी इतनी हद तक है, जितने कि कूटनीति के आत्मना में हम शिकार बन

हैं उसमें राजनैतिक दृष्टि रखनेवालों को सन्तोष हो उसके लिए काफी गुंजाइश है और हरएक अपनी मांग में जो नुस्ति है उसे जानता है ।”

• • • • •

आक्सफोर्ड से हम लौटते, परन्तु उसकी मधुर-से-मधुर स्मृति लेकर ।
 उसमें सबसे अधिक मधुर स्मृति है डा० लिण्डसे और उनकी पत्नी की,
 जिनके यहाँ हम ठहरे थे । एक सम्भाषण में गांधीजी को जनरल डायर
 और अनृततर में लोगों को जित्त गली में पेट के बल चलाया गया था
 उसका उल्लेख करना पड़ा । श्रोतागण ऐसी सहायुभूति अनुभव करने-
 वाले थे कि उनमें कुछ लोगों को उसके वर्णनमात्र से कँपकँपी आ गई ।
 सभा के अन्त में श्रीमती लिण्डसे गांधीजी के पास आई और मधुरता
 से बोली, “यदि आप इसे योग्य प्रायश्चित्त समझे तो हम पचास बार
 पेट के बल चलने के लिए तैयार हैं ।” गांधीजी ने कहा, “नहीं, नहीं,
 ऐसा करने की कोई जरूरत नहीं है कोई भ्रंश ऐसा करे, वह मैं नहीं
 चाहता मैं या आप स्वच्छादर्शक पञ्चम बार पेट के बल चले, परन्तु
 यदि मैं किसी अंग्रेज लड़के को जराइस पेट के बल चलने पर मजबूर
 करूँ तो वह मुझे सच मानेगा और वह सर्वथा उचित हो होगा । मुझे
 तो आपको अन्तर्गत का एक उदाहरण मान देना था प्रायश्चित्त तो
 यही चाहिए कि अंग्रेज लोग भारत में मानक बनकर नहों, मेवक बन
 कर रहे । मैं भारत के आचार्य एक हिन्दू हूँ, जो प्रजापति को
 समझाया और स्वस्मर सेवने और भक्त सेवने रहे हैं, इससे स्पष्ट भारत
 के आदिपुत्र के धर्म में वह स्वभाव, संस्कार है और जहाँ तक सम्भव
 हो मैंने इस सम्बन्ध आरसे को टाँसने के लिये यही चयन है

Heroic and devoted as such a stone.

He had no gift for life, no gift to bring

Life but his body and a cutting wedge.

But he knew how to die."

बैलियल के आचार्य के तत्त्वज्ञान में यदि जान ब्राउन को स्थान है, तो इसमें सन्देह नहीं कि गांधीजी के लिए तो बहुत ही गुंजाइश होगी, जिन्होंने कि जान ब्राउन के उपायों को सम्पूर्ण करके बतला दिया है।

गांधीजी ने विलायत पहुँचते ही तुरन्त ही कर्नल मैडक के बारे में पूछताछ आरम्भ कर दी थी। कर्नल मैडक एक दिन आए और रीडिंग

कर्नल मैडक के पास के अपने मकान पर आने के लिए गांधीजी

से आग्रह कर गये। उन्होंने कहा, "मेरी पत्नी ने

आपके लिए अच्छे फल-फूल और शाक-भाजी चुन रखे हैं।" सौभाग्य

से ईटन और आक्सफोर्ड जाने के लिए रीडिंग होकर जाना होता है,

इसलिए गांधीजी ने निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। सात वर्ष के बाद

मिलने पर गांधीजी और मैडक-दम्पति दोनों को बड़ा आनन्द हुआ।

गांधीजी ने आभार प्रदर्शित करने हुए 'पामन' मैडक से कहा—“आपके

पति ने मुझ पर सफल शस्त्र-प्रयोग न किया होगा तो मैं आज आगने

मिलने यहाँ न आ सकता। कर्नल मैडक को उनके जीवन के सायकल

के समय बीस वर्ष के युवक के रूप में उत्साह में मशगूल का कार्य करते

और विस्मित कर देने जितने अधिक विषयों में सलग्न देखना, मेरे लिए

तो बड़े सौभाग्य की बात थी। वह कुशल वागधान हैं और उनके

सुन्दर बगीचे में भाते भाति के फूल और फल के वृक्ष हैं। उनपर व

सरह-सरह के प्रयोग करने हैं। उन्हें गुप्तानुप के काम में भी उतारी है। दिल-नशी है और गांधी के रूप के कारणों की शोष करने हुए उन्होंने गांधी के खाने के भाग पर विविध प्रयोग किये हैं। उसमें मासिक पैसा करनेवाले परमाणुओं पर उन्होंने दिन के दिन बिना शिरे और उगमें सकलता प्राप्त की, परन्तु उन्हें उगमें आर्थिक लाभ नहीं मालूम हुआ। यह घर के उपयोग के लिए पेट्रोल में पैसा बनाने है और हमेशा काम में लगे रहते हैं। श्रीमती मैडक ने कहा—“गांधीजी, मैंने आपको पूना में देखा था, उससे बुद्धे तो आप बिलकुल नहीं मालूम पड़ते।” ठीक इसी प्रकार मुझे भी कहना चाहिए कि कर्नेल मैडक जैसे पूना में थे उससे बुद्धे नहीं दिखाई दिये। बल्कि शायद किसी तरह उससे कम उस ही दिखाई पड़े, क्योंकि अब वह अपने आदर्श के जजाल से मुक्त थे और अपने मन मुआफिक काम करने के लिए स्वतन्त्र थे। जिस प्रकार कर्नेल मैडक अपने समय का मूल्यवान उपयोग कर रहे हैं उसी प्रकार सभी लोग नौकरी में अलग-अलग पर अपने समय का सदुपयोग करें, तो क्या अच्छा हो !

यह बड़ा अच्छा हुआ कि श्री होराविन तथा कृष्णा मेनन ने कामन्-लथ ऑफ इण्डिया लीग के अन्तर्गत गांधीजी के स्वागत सम्मान का विचार किया। श्री होराविन ने स्वराज्य-सम्बन्धी रावलम्बी ब्रिटिश भारतीय माँग के प्रति लीग के जोरदार समर्थन का जनता गांधीजी को आश्वासन दिया और गांधीजी से यह जानने के लिए कहा कि किस प्रकार वे मदद करें, जो बहुत उपयोगी प्रवृत्ति हो। गांधीजी ने कहा—“हिन्दुस्तान के सम्बन्ध में सच्चा ज्ञान

फैलाइए, और अंग्रेज़ प्रजा को जिस भूठे इतिहास पर पाला गया है उसका स्थान सच्चे ज्ञान को दिलाइए ।” विलायत के पत्र जान-बूझकर सच्ची बात को दबाकर भूठी बातें फैलाते हैं । इस सम्बन्ध में उन्होंने चटर्गांव और हिजली के अत्याचार और विलियर्स और इनों पर हुए आक्रमण का सबल उदाहरण दिया । चटर्गांव और हिजली के अत्याचार, जिनके कारण वयोवृद्ध और बीमारी के विछौने पर पड़े हुए कविवर का पुण्य प्रकोप भड़क उठा और उन्होंने अपने एकान्त-वास का त्याग किया, उनका तो केवल नाम ही विलायत के पत्रों में आया है । परन्तु यह बताना न चूके कि ये कैदी दुष्ट हैं और वे गोली से मार देने लायक हैं । गांधीजी ने कहा, “ये दोनों खूनी हमले दुःखदायक और लजाजनक हैं और मेरी परेशानी के बायस हैं । परन्तु यदि आप इन्हें इतना बड़ा रूप देते हैं, तो चटर्गांव और हिजली को क्यों नहीं देते ? कार्य-कारण का नियम तो अटल है । केवल सन्देह पर ही बिना मुकदमा चलाये अनिश्चित मुद्दत के लिए इन नौजवानों को कैद में रखा जाता है, उन्हें दबाकर कुचल डाला जाता है । उनके कुछ मित्र गुमराह होते हैं और बैर लेने का प्रयत्न करते हैं । इन कृत्यों की मुझसे अधिक कोई निन्दा करे, यह संभव नहीं है, क्योंकि मुझे दोनों तरफ़ की हिंसा के प्रति तिरस्कार है, और मुझे मेरे पक्ष की हिंसा अधिक कष्टप्रद मालूम होती है । मेरी स्वार्थ-बुद्धि यह है कि यह हिंसा मेरे काम में बाधा डालती है । यह बात ठीक है कि वे लोग महासभावादी नहीं हैं, परन्तु यह जवाब मेरे लिए नहीं हो सकता । क्योंकि ये हैं तो हिन्दुस्तानी ही; और इससे यह ज़ाहिर होता है कि महासभा उनकी प्रवृत्ति पर अंकुश रखने और उनका पागलपन

रोकने में असमर्थ है। परन्तु यह न भूलना चाहिए कि इसका दूसरा पहलू भी है—भारत जैसे विशाल देश में इतने कम हिंसक अत्याचार होते हैं, यही आश्चर्य की बात है, क्योंकि चटगांव और हिजली जैसे जङ्गली अत्याचारों के विरुद्ध दूसरे किसी भी देश में चारों ओर खुला बलवा हो गया होता। मैं चाहता हूँ कि अखबार सारा सत्य प्रकट करें। उसके बदले यहां मौन और झूठे और अपूर्ण विवरण प्रकट करने के पड्यन्त हो रहे हैं।”

उपस्थित जनों पर इसका असर हुआ और रेवरेण्ड वेल्डन ने एक प्रस्ताव उपस्थित किया, जिसमें ब्रिटिश पत्रों से प्रार्थना की गई कि वे पूरी और सच्ची बातें प्रकाशित करने की आवश्यकता समझें, साथ ही इसमें यह चेतावनी भी दी गई कि मन्ची बातों का दवाना हिन्दुस्तान और इंग्लैंड दोनों के प्रति बड़ा अन्याय है। प्रस्ताव को पेश करते हुए रेवरेण्ड वेल्डन ने एक जोरदार वक्तृता दी और गांधीजी को आश्वासन दिया कि हिन्दुस्तान में यदि सत्याग्रह जारी करना पड़े तो फिर उसके साथ-साथ इंग्लैंड में भी सत्याग्रह-आन्दोलन होगा। प्रगति-विरोधी पत्रों के प्रतिनिधि इन सब बातों को बरदाश्त नहीं कर सके, इसलिए उन्होंने इसका विरोध किया और कहा कि यह प्रस्ताव तो इंग्लैंड के अखबारों के लिए अपमानपूर्ण है। उसमें से एक ने तो बहाने कद डाला कि गांधीजी हमें समाचार ही नहीं देने, हालांकि हमारी कम्पनी ने इसके बदले में उनकी चलती-बोलती तस्वीर लेने का भी आग्रह किया था। इस मित्र ने, अपने साथ, दूसरों को भी गांधीजी के आगे ला बसीटा; और उन सबको पराजित करने हुए गांधीजी ने कहा—“अच्छा, सुनिए,

जो मित्र जल में डोले उनके लिए तो सत्य किसी बात की अपेक्षा
 स्यासतिक बात ही मुख्य है। पर दूसरों के सामने मैं एक महत्वपूर्ण
 बात रखता हूँ। चटगांव और दिल्ली में जो कुछ हुआ मैं उन्हें उसका
 सच्चा-सच्चा हाल बतलाना चाहता हूँ। क्या वे उसे प्रकाशित करेंगे ?
 दूसरी महत्व की बात और मुनिष्ट। जबतक मैं यहां पर हूँ, मुझे उनके
 लिए, बिना किसी मुझाविज्ञे की आशा के, रोज-ब-रोज, भारत के समा-
 चार मिलते रहते हैं। क्या वे उन समाचारों को प्रकाशित करेंगे ?”
 खबर सनाटा छा गया, विरोध और प्रतिवाद की आवाजें बन्द हो गईं,
 और सिर्फ उन दो-तीन की तटस्थता के साथ प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

: ४ :

जब हम बैठन जा रहे थे तो पहला प्रश्न गाँधीजी ने वही किया क्या बैठन वही स्कूल है, जहाँ जवाहरलालजी पढ़ चुके हैं ? मैंने उन्हें बताया कि वह स्थान हैरो है, बैठन नहीं—इसपर, कुछ केम्ब्रिज अत्युक्ति न समझिए, गाँधीजी का कुछ उत्साह तो वहीं ठण्डा हो गया । अतः पाठक समझ सकते हैं कि गाँधीजी केम्ब्रिज जाने के लिए उत्सुक क्यों थे । यह जवाहरलालजी और श्री एण्डरसन का केम्ब्रिज है और जब एण्डरसन उनको सुबह घूमने के लिये तो गाँधीजी ने ट्रिनिटी कॉलेज के विशाल मैदान में से टाकर चलने की टक्का प्रकट की क्योंकि जवाहरलालजी ट्रिनिटी कॉलेज में पढ़ चुके हैं । इन आप भावुकता समझिए या और कुछ, वह मेरे मनुष्य स्वभाव ही है और गाँधीजी, अन्य पुरुषों की तरह, उसमें बरा नष्ट हो सकते । ट्रिनिटी कॉलेज में जवाहरलालजी ही नहीं बल्कि टेनिसमन, बैडमिन्टन, ग्रीक ग्रीस आदि भी पढ़ चुके हैं; परन्तु हम उसे कभी नहीं देखेंगे, यदि हमका यह न मान्य होता कि वही जवाहरलालजी पढ़ चुके हैं—जैसे हमने जस्टिस चर्च को नहीं देखा, हालाँकि वहाँ बहुत स्थान पढ़ चुके हैं । वही केम्ब्रिज के लिए कहा जा सकता है—यह हमको इसलिए प्रिय है कि वहाँ श्री

एडवर्ड पद चुके हैं; इसलिए नहीं कि मे और स्पेन्सर जैसे कवि वहाँ पढ़े थे। जब सन् १२६१ में आक्सफ़ोर्ड में पहले कालेज की स्थापना हुई, केम्ब्रिज की अभिलाषायें भी जाग उठीं और थोड़े ही काल में वेलियल और मार्टन के मुक्ताविले में केम्ब्रिज में पीटरहाउस की स्थापना हो गई। यह प्रतियोगिता बराबर जारी रही और दोनों को इङ्गलैंड के महापुरुषों का वहाँ के विद्यार्थी होने का गर्व समान रूप से है। यदि केम्ब्रिज में आक्सफ़ोर्ड से कम कालेज हैं तो वहाँ विद्यार्थियों की संख्या अधिक है। यदि आक्सफ़ोर्ड में टेम्स नदी और उसके भव्य किनारे हैं तो केम्ब्रिज में वह 'बन्द' है, जहाँ कैम नदी चक्कर काटती हुई वहाँ की भूमि को एक अत्यन्त सुन्दर भूस्थल होने का गर्व दिलाती है। इन कालेजों की स्थापना धार्मिक विचारों को लेकर हुई है और इसको याद दिलाने के लिए अब भी इन दोनों स्थानों पर 'चेपल' विद्यमान हैं। किंग्स कालेज (केम्ब्रिज) का चेपल १५ वीं शताब्दी में छठे हेनरी ने बनवाया था और यह भवन निर्माण-कला का एक अद्भुत उदाहरण है, जिसको देखने इङ्गलैंड के सभी यात्री आते हैं। कवि मे ने अपनी प्रसिद्ध 'एलेजी' के ये शब्द इसी भवन में उत्पादित होकर लिखे थे—

"Where through the long drawn aisle and fretted vault
The pealing anthem swells the note of praise"

इसकी खिड़कियों में जो रंगीन काच जड़े हैं उनमें ईसा के जीवन, मृत्यु और स्वर्गारोहण के चित्र चित्रित हैं और कहा जाता है कि काच की चित्रकारी में सन्तार-भर में वहाँ की चित्रकला सर्वोपरि है। आश्चर्य तो यह है कि चित्रकार और राज वहाँ के कालेजों के 'फेलो' (सदस्य)

संस्था होने के दावे में परेशानी हुई भी, तो कैम्ब्रिज के अध्यापकों को भारत के इङ्गलैंड और साम्राज्य में सम्बन्ध-विच्छेद की योजना से कम परेशानी नहीं हुई। पूर्ण स्वतंत्रता की बात कर इङ्गलैंड को क्यों नाराज़ करते हो ? क्या भारत में अँग्रेज़ी राज्य ने हानि के बिना लाभ कुछ नहीं किया ? क्या ब्रिटिश सत्ता के अधिकार में रहता हुआ भारत स्वतंत्र सरकारवाले चीन से शच्छी हालत में नहीं है ? यदि ग़ोरे सिपाही और सरकार के नीचे रहकर नौकरी नहीं करना चाहते तो क्या कुछ काल के लिए शांति के नाते उनकी बातें नहीं मान लेनी चाहिए ? क्या स्थिति इतनी भयानक हो चली है कि यदि पूर्ण अधिकार नहीं प्राप्त हुए तो भारत १० लाख जान की कुर्बानी कर देगा ? ऐसे-ही-ऐसे प्रश्न नहीं चल रहे थे। पेम्ब्रोक के छात्रावास के मकान में उस समय यूनिवर्सिटी के सभी विद्वान् मौजूद थे, जो गांधीजी के मुख से भारत के विषय में सुनने और यथासम्भव सहायता देने के लिए जमा हुए थे। श्री एलिस बार्कर जैसे बड़े नामी प्रोफ़ेसर जिनका नाम प्राचीन और मध्यकालीन राजतंत्रों के अध्ययन के लिए प्रसिद्ध है; श्री वेज़ डिकिन्सन जैसे बड़े योग्य विद्वान् जिनके पूर्वोक्त देशों के अध्ययन और अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति-स्थापना के प्रयत्न से हम भारत तक में परिचित हैं, डाक्टर जॉन मरे और डाक्टर बेकर आदि जैसे धर्मशास्त्र के प्रौढ़ पंडित भी वहाँ उपस्थित थे। उसी सभा में 'स्केट्टर' के श्री एल्विन रैड भी थे जो ऐसी योजना की खोज में हैं जिससे इङ्गलैंड और भारत के बीच शान्ति रहे और विरोध के नौक्रे कम-से-कम आवें।

उनकी विद्वत्ता, उदारता और स्थिति को समझने और सहायता

उ०—“मैं यह हठ नहीं करूँगा कि हमारे सामने की पहली यह शर्त है कि ब्रिटेन पहले उनकी ओर भी अपनी नीति बदले। परन्तु मैं वहाँ की आदिम जाति के कष्ट-निवारण का प्रयत्न अवश्य करूँगा क्योंकि मुझे अनुभव है कि वे भी ब्रिटेन की शोषण-नीति के शिकार हैं। हमारे गुलामी से मुक्त होने का अर्थ है कि वे भी स्वतंत्र हो जायें। यदि यह संभव न हो तो मैं उन साम्राज्य में नहीं रहूँगा, चाहे वह भारत के भले के लिए ही हो। व्यक्तिगत रूप से तो मैं यही कहूँगा कि यह साम्राज्य मेरी जाति के योग्य होगा और मैं उसको सदा कायम रखने का प्रयत्न भी करूँगा, जिससे संसार इस शोषण-नीति से सदा के लिए दूरी हो जायगा। भारत कभी किसी दशा में इस नीति का स्वागत नहीं करेगा और मेरी तो यह दृढ़ धारणा है कि यदि महासभा भी इस साम्राज्य-नीति को स्वीकार कर ले तो मैं उनसे भी अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर लूँगा।”

प्र०—“क्या महासभा अभी किलहाल, जबतक अन्य प्रबन्ध न हो दक्षिण-अफ्रिका, कनाडा आदि के समकक्ष स्थान से संतुष्ट नहीं होगी?”

उ०—“इस प्रश्न के उत्तर में ‘हाँ’ कह देने में मुझे खतरा मालूम होता है। यदि आप इससे किसी अप्रिय अन्धारे और उच्च-स्थिति का कल्पना करते हैं। का जितने प्राप्त करने के लिए हमें यह प्रयत्न करना होगा, तो मेरा उत्तर ‘नहीं’ है। और यदि वह स्थान ऐसी आदर्श है कि फिर हमारा कोई अनिलाया बाका नहीं बचता, तो मेरा उत्तर ‘हाँ’ है। वह स्थान तो अनुक्त तभी होगा, जब सर्व-साधारण तक को यह अनुभव होने लगे कि वे पहले से तबथा प्रियतम अवस्था में हैं। अतः मैं थोड़े भी काल के लिए कोई नाच-दुर्ग स्वीकार करने को तैयार नहीं

हूँ । महात्मा तो सर्वोत्तम स्थान में गोरे भी जीने स्थान से मजबूर नहीं होगी ।”

प्र०—“इन राजाओं का क्या होगा, ये तो स्वाधीनता नहीं चाहते।”

उ०—“हाँ, मैं जानता हूँ, ये नहीं चाहते । परन्तु ये तो मजबूर हैं, इसके गिया कुछ कर ही नहीं सकते । ये तो ब्रिटिश सरकार के आश-पालक हैं । परन्तु ऐसे अन्य व्यक्ति भी तो हैं, जो ब्रिटिश शक्तों ही को अपना रक्षक समझते हैं । मैं तो क्रीज पर पूरा अधिकार मिले बिना कुछ न लूँगा । यदि भारत के सभी नेता मिलकर इस क्रीजी अधिकार के पूश्न पर अन्य कोई समझौता कर लें तो भी मैं इससे बाहर रहूँगा, चाहे उसका विरोध न करूँ, लोगों को और त्याग करने और कष्ट सहने को न कहूँ । यदि कोई ऐसी रीति निकाली गई कि जिससे हमारी सब आशाएँ कुछ असें में मगर शीघ्र ही पूरी हो जाती हों, तो मैं उसे सहन कर लूँगा; परन्तु उसके लिए अपनी स्वीकृति नहीं दूँगा ।

“परन्तु यदि आप यह कहें कि गोरी क्रीजें राष्ट्रीय सरकार के अधीन रहकर काम नहीं करेंगी, तो मेरी सम्मति में तो यह ब्रिटेन और हमारे सम्बन्ध विच्छेद का ज्वरदस्त कारण हो जायगा । हम नहीं चाहते और न हम बरदाश्त करेंगे कि हम पर कब्ज़ा जमानेवालों क्रीज यहाँ रहे । ऐसी किमी क्रीज को भारतीय बनाने की योजना हमारे लिए लाभप्रद नहीं हो सकती है, जिसमें अन्ततः अधिकार गोरों के हाथ में हो और जिसमें हमारे अधिकार पाने की योग्यता पर वैसा ही सन्देह प्रकट किया जाता हो कि जैसा आज किया जा रहा है । सच्ची उत्तरदायित्वपूर्ण सरकार तो तभी स्थापित हो सकती है, जब अँग्रेज़ हम पर और हमारी

योग्यता पर विश्वास करें। यह अशान्ति तो तभी दूर होगी, जब ब्रिटेन को यह विश्वास हो जायगा कि उसने भारत के साथ अन्याय किया है और वह उसके प्रायश्चित्त के लिए गोरी फौजों को भारतीय मंत्रियों के अधिकार में दे देगा। क्या आपको डर है कि भारतीय मंत्रियों की मूर्खतापूर्ण आज्ञाओं से गोरे सिपाही मार डाले जायेंगे? क्या मैं आपको याद दिलाऊँ कि गत दोअर-युद्ध में एक ऐसा अवसर आया था, जिसमें इंग्लैंड में उस युद्ध के ब्रिटिश जनरलों को गवे कहा गया था और गोरे सिपाहियों की वीरता की प्रशंसा की गई थी। अगर बड़े-बड़े ब्रिटिश जनरल भी शलती कर सकते हैं तो भारतीय मंत्रियों को भी करने दो। ये भारतीय मन्त्री निश्चय ही कमाण्डर-इन-चीफ और अन्य फौजी विशेषज्ञों से नम्र बातों में परामर्श करेंगे, हाँ, आखिरी जिम्मेदारी और अधिकार मन्त्री का होगा। तब कमाण्डर-इन-चीफ को स्वतन्त्रता होगी कि वह आज्ञा-पालन करे या इस्तीफा दे दे।

स्वतन्त्रता का मूल्य खून से चुकाने का मेरा विचार आपको चौंका देता है। मैं हिन्दुस्तान की मध्य हालतों में वाकिफ होने का दावा करता हूँ और इसलिए कहता हूँ कि हिन्दुस्तान एक एक इञ्च करके आनेवाली मौत में मर रहा है। लगान का बसुल का अर्थ है किसानों के बालको के मुँह में और छात्रों के छात्रों के छात्रों के मुँह में गूँजर रहा है। इसका इलाज दवाखानों में करना पड़ेगा। क्या ब्रिटिश सरकार इसका भी जो खर्च करवा दे रहा अर्थ का है। क्या यह हमारा मांस करने से अर्थात् हमारे हृदय के अन्तर्गत के अर्थ को खर्च करके मर रहा है तो हम जो मर रहे हैं और हमारे मांस को खर्च करके मर रहे हैं।

अनुसार उन्हें तनख्वाह देंगे । परन्तु यदि प्रामाणिकता के नाथ यह माना जाता हो कि हम नालायक हैं और ब्रिटिश अधिकार को दीला नहीं करना चाहिए तो, यदि ईश्वर की ऐसी इच्छा है, हमें कष्ट-महन की कमीठी में से गुजरना चाहिए । मैंने दूसरे लोगों के खून बहाने की बात नहीं कही है, क्योंकि मैं यह जानता हूँ कि हिंसक-दल मिटते जा रहे हैं । परन्तु हमारे अपने खून की गंगा बहाने की—प्राप्त स्थिति का सामना करने के लिए स्वेच्छापूर्वक शुद्ध-आत्मबलिदान करने की बात मैंने कही थी । यदि उसमें मेरे उमे गुजरना ही चाहिए तो यह कष्ट-महन भारत को लाभ ही पहुँचायगा । मैं खुद तो यह खयाल नहीं करता कि कौमी दंगे, जिसका आपको भय है, होंगे । भारत की आबादी का ८० फी सैकड़ा ग्रामवासी है और यह झगड़े शहर की १० फी सैकड़ा आबादी में ही होंगे हैं । जिस मृत्यु में कुछ भी गौरव नहीं, ऐसी इस तुच्छ मृत्यु की अपेक्षा मैं उस खूनखराबा को कुछ भी न गिर्नूँगा । बेशक, इसमें यह बात मान ली गई है कि भारत को जो विदेशी सेना उसपर कब्जा किये हुए है उसका और दुनिया में सबसे खर्चीली सिविल-सर्विस का इतना भारी खर्च देना पड़ता है कि उसे भुखी मरना पड़ता है । जापान को इतनी बड़ी सेना रखना है इसकी भी सेना का इतना खर्च नहीं है जितना कि भारत को देना पड़ता है ।

“आपने मेरा यह झगड़ा है । मैं यह जानता हूँ कि प्रत्येक प्रामाणिक अंग्रेज भारत को स्वतन्त्र देखना चाहता है, परन्तु क्या यह दुःख की बात नहीं है कि वे यह खयाल करने हैं कि ब्रिटिश सेना भारत में नें दयाई नहीं कि उसपर अकनन और परन्पर के युद्ध होने लगेंगे !

इसके विरुद्ध मेरा तो यह कहना है कि अँग्रेजों की मौजूदगी ही अन्दरूनी अन्धधुन्धी का कारण है, क्योंकि आपने फूट डालकर राज्य करने की नीति से भारत पर राज्य किया है। आपके उपकारक इरादों के कारण, आपको ऐसा प्रतीत होता है कि नेदक को खुरपी चुभती नहीं है। परन्तु स्वभाव से ही यह तो चुभेगी। आप हमारे आमन्त्रण से तो भारत में आये नहीं। आपको यह जान लेना चाहिए कि सब जगह असन्तोष फैला हुआ है और हर एक शख्स यह कहता है कि 'हमें विदेशी राज्य नहीं चाहिए।' आपके बिना हमारी कैसे गुजरेगी, इसके लिए आपको इतना अधिक चिन्ता क्यों है ? अँग्रेजों के आने के पहले के ज़माने का खयाल कीजिए। इतिहास में हिन्दू-मुसलमानों के दंगे आज से अधिक दर्ज नहीं हैं। सच बात तो यह है कि हमारे ज़माने का इतिहास ही अधिक काला है। अँग्रेजी बन्दूके अपराधी और निरपराधी को दड देने में समर्थ हैं, फिर भी दंगे रोकने में असमर्थ हैं। और गजेब के राज्य-काल में भी दंगों का दाना मुनाई नहीं देता। आक्रमणों में बुरे-ले बुरा आक्रमण भी लोगों को छू नहा गया है। वे महामार का तरह एक समय पर आने



‘सन्तति राष्ट्र’ के रूप में व्यवहार किया है ? अनिवेश तो ऐसे है कि जिन्हें प्रकृति ने एक-दूसरे से सम्बन्ध कर रखा है, वे ‘मातृदेश’ (Mother Country) से ही निकल कर बढ़े हैं। हिन्दुस्तान को ऐसा नहीं कह सकते, उसे ऐसी वस्ती (Colony) या कड़ी (Link) बैसे मान सकते हैं।” और गाँधीजी ने वृत्तवृत्ता के साथ कहा, “श्रीमती हचिन्सन, आपने चार तो निशाने पर किया है।”

मुझे यह स्वीकार करना चाहिए, कि हिन्दुस्तानी मजलिस में, भारतीय लड़कों की अपेक्षा अंग्रेज़ लड़कों ने ही अधिक अच्छे प्रश्न पूछे थे। अज्ञानयुक्त प्रश्न पूछनेवाले तो दोनों ही में थे। राबण के मस्तकों की तरह अल्पसंख्यक कौमों का प्रश्न बार-बार निकलता था। गाँधीजी ने उसका इस प्रकार उत्तर दिया, “यह खयाल न करें कि भारत में हिन्दू, मुसलमान और सिख जनता को लकवा मार गया है। यदि यह बात होती तो भारत की सबसे बड़ी संस्था का प्रतिनिधि बनकर मैं यहाँ न आया होता। परन्तु बेवकूफी तो केवल यहाँ आये लोगों में ही है।” और जब गाँधीजी ने यह खुलाता किया कि “यहाँ आये लोगों के मानी यहाँ आये हुए भ्रोता नहीं परन्तु गोलनेज़-परिषद् के भारतीय प्रतिनिधि हैं जिनमें से एक मैं भी हूँ” तो लड़के खिलखिला कर हँस पड़े। एक अंग्रेज़ लड़के ने यह अज्ञानपूर्ण-प्रश्न किया कि “गाँवों के बेकार लोग शहरों में जाकर किसी उद्योग में क्यों नहीं लग जाते हैं ?” इसके उत्तर में गाँधीजी ने विनोद में कहा, “खेतीवारी के शाही कमीशन ने भी यह उपाय नहीं सुझाया था।

लेकिन इस अट्टहान में सच्चा सन्देशा लुप्त नहीं हो गया। क्योंकि

बैन हो, वह क्या जांच करे और किस तरह काम करे आदि सब विषय की चर्चा हुई। उन्होंने गांधीजी से मिलकर भारतीय स्थिति के सम्बन्ध में बड़े आवश्यक प्रश्न पूछे। मैं सब गवाल का जवाब यहाँ न दूँगा, परन्तु अल्प-संख्यक कीर्मी के प्रश्न को संप-विधान के प्रश्न के मार्ग का रोड़ा लगाने में जो दंभ और इन्द्रजाल बिछाया हुआ था उसे उन्होंने जिन दिक्कत शब्दों में स्पष्ट किया, उसे यहाँ देने के लालन को मैं नहीं रोक सकता। "मैंने परिषद् को पसंद किए लोगों को बताया है और यह विचारपूर्वक है। अगर आप चाहें तो कुछ बातें कितनी जुरी हैं और इस परिषद् के होने के पहले कैसी चालें हुई थीं यह मैं आपको दिखा सकता हूँ। यदि हमें हिन्दू-महासभा, मुसलमान, या अष्टश्यों के प्रतिनिधि चुनने को कहा गया होता तो हम आसानी से महासभा के प्रतिनिधि भेज सकते थे। क्या महासभा ने देशी राज्यों की प्रजा के अधिकार यों विक्रि जाने दिये होते ? राजा जो अपनी प्रजा के भी प्रतिनिधि होने का दावा करते हैं, उनका दावा टिक नहीं सकता है। राजाओं को इस दोहरे अधिकार से बुलाने में ही परिषद् का सबसे बड़ा दोष है। भारत में देशी राज्य प्रजा परिषद् है, वह इस प्रश्न पर बड़ा बखेड़ा खड़ा कर सकती थी, परन्तु मैंने उसे समझाकर रोक रखा है।

"मेरे मन में जो बात थी वह मैंने कह दी है। महासभा अल्पसंख्यक जातियों के अधिकारों को बेच देने में असमर्थ है। अछूतों को मैं अच्छी तरह जानता हूँ, यह मेरा दावा है। उन्हें जुरे प्रतिनिधि मण्डल देना उन्हें भार डालना है। अभी वे उच्च वर्गों के हाथों में हैं। वे उन्हें पूरी तौर से दया सकते हैं और उनसे जो उनको दया पर निर्भर है, बदला

भी ले सकते हैं। मैं यह रोकना चाहता हूँ, इसीलिए तो कहता हूँ कि मैं उनकी तरफ से जुदे प्रतिनिधि-मण्डल की माँग के विरुद्ध लड़ूँगा। मैं जानता हूँ कि यह कहकर मैं अपनी शर्म को आपके सामने स्पष्ट करता हूँ। परन्तु वर्तमान स्थिति में मैं उनके नाश को कैसे बुला लूँ? मैं ऐसा अपराध कभी न करूँगा। श्री अम्बेडकर योग्य पुरुष हैं, परन्तु दुर्भाग्य से इस मामले में उनका दिमाग़ फिर गया है। मैं उनके श्रद्धुओं के प्रतिनिधि होने के दावे को अस्वीकार करता हूँ।

“अब दूसरा सिरा लीजिए—यूरोपियनों का। मैं दूसरे कारणों से उनके लिए जुदे प्रतिनिधि-मंडल होने का सख्त विरोध करूँगा। वे राज्य करनेवाली प्रजा हैं और उनका देश में असाधारण प्रभाव है। आप यह जानते हैं कि प्रथम भारतीय गवर्नर का जीवन उन्होंने कैसा असह्य बना दिया था? उनके मन्त्री ही उनके पीछे पड़े थे, और नौकर ही उन पर जासूसी करते थे। गोलमेज़-परिषद् में यूरोपियनों के प्रतिनिधि सर-हयवर्ट्ज़कार ने मैंने पूछा कि आप मत के लिए हमारे पास क्यों नहीं आते। एण्डरूज़-जैसे पुरुष को भारतीय मतदाना अवश्य चुनेंगे इसका आप यकीन रखें। उन्होंने कहा कि—‘श्री एण्डरूज़ अँग्रेज़ों के योग्य प्रतिनिधि न होंगे। वे किसी भारतीय की तरह अँग्रेज़ों के मानस के प्रतिनिधि नहीं हैं।’ इसके उत्तर में मेरा यही कहना है कि ‘यदि अँग्रेज़ों को भारत में रहना है तो उन्हें भारतीय मानस का प्रतिनिधि बनना चाहिए।’ दादाभाई नौरोज़ी ने जिन्हें लॉर्ड सोल्सबरी ‘काला आदमी’ कहा करते थे, क्या किया? वे सेंट्रल फ्रीन्सबरी के मतों से पार्लैमट में गये थे। एंग्लो-इण्डियनों में के गरीबों को कर्नल गिडनी की अपेक्षा मैं

अधिक जानता हूँ। मुझे उनकी स्थिति का तादृश्य ज्ञान है। वे मेरे सामने आकर रोये हैं। उन्होंने कहा है—‘हम अँग्रेजों की नक़ल करते हैं और वे हमें अपनाते नहीं। विचित्र रिवाज और रहन-सहन स्वीकार कर हम भारतीयों से दूर जा पड़े हैं।’ मैं उनसे कहता हूँ कि, आप फिर हमारे पास चले आइए, हम आपको अपनावेंगे, यदि वे जुदे प्रतिनिधि-मण्डल स्वीकार करेंगे तो अस्तुश्य हो जायेंगे। कर्नल गिडनी की स्थिति भले ही सलामत रहे, परन्तु उनकी तरह सब ‘नाइट’ तो न होंगे। परन्तु सेवा के जंरिये वे लोगों के पास जायेंगे और उनका मत माँगेंगे तो वे सब सलामत रहेंगे।”

: ५ :

लङ्काशायर के कारखानों के कुछ विभाग में खासतौर पर हिन्दु स्तान को भेजने के लिए ही सूती माल तैयार किया जाता है। “सज्जन से जिस विनय की आशा रखी जा सकती है उसको लङ्काशायर में अनुभव करने के लिए हम तैयार थे, मुसीबतों और गलतफ़हमी के कारण उत्पन्न कुछ कड़ुता को भी अनुभव करने के लिए हम तैयार थे; परन्तु हमने तो उसके बदले यहाँ प्रेम की वह उष्णता पाई जिसके लिए हम तैयार न थे। मैं ज़िन्दगी-भर अपने हृदय में इस स्मृति को क़ायम रखूँगा।” इन शब्दों में, जिनका कि सारांश वह वहाँ के मालिक और करीबों की हर एक सभा में दोहराते थे। गाँधीजी को इन सब मित्रों से मिलने का जो अवसर उन्हें मिला, उसके लिए अपनी कृतज्ञता प्रकाशित की। इस स्वागत में जो प्रेम भाव था, उसकी तो केवल भारत के शहरों और देहानों में गाँधीजी का जो स्वागत होता था उसीसे तुलना की जा सकती है। वहाँ कोई सर्वसाधारण सभा नहीं हुई, परन्तु उसमें कहीं अच्छा मालिक और मजदूरों के विभिन्न समुदायों में दिल खोलकर बातें करने का आयोजन हुआ। उन्होंने गाँधीजी के सामने अपनी सब बातें पेश कीं और गाँधीजी ने एक ही जवाब बार-बार

दोहराने का प्रयत्न उठा। वरन्, जो मध्य समझौते में सुलाकात थी, किसीको इनकार न किया।

उस मधुकी बातें पूर्णपूर्वक सुन लेने के बाद गाँधीजी को यह कहने में कुछ आनन्द नहीं हो सकता था कि वह उन्हें बहुत-कम सुख पहुँचा सकते हैं। वे शान्त बड़ी आशाओं रखकर आने दुःख का कारण होने। परन्तु गाँधीजी को बड़े दुःख के साथ उनपर यह बात स्पष्ट करनी पड़ी कि मुझे उस काम का भार उठाने के लिए कहा जा रहा है जिसे उठाने के लिए मैं और मेरा देश दोनों असमर्थ हैं। “मेरी राष्ट्रीयता इतनी संकुचित नहीं है, कि मैं आपके दुःखों के लिए दुःख अनुभव न करूँ और उसपर हर्ष मनाऊँ। दूसरे देशों के सुख को नष्ट करके मैं अपने देश को सुखी करना नहीं चाहता। किन्तु, यद्यपि मैं यह देखता हूँ कि आपको बड़ी हानि हुई है, परन्तु मुझे भय है कि आपका दुःख मुख्यतः हिन्दुस्तान के कारण ही नहीं है। कुछ वर्षों से स्थिति खराब ही चली आती है, बहिष्कार तो उसमें आखिरी तिनका है।” उन्होंने स्पिंगवेल गार्डन नामक गाँव में कहा—“संधि पर ५ मार्च को दस्तखत हो जाने के बाद विदेशी कपड़े से भिन्न ब्रिटिश कपड़े का बहिष्कार नहीं हो रहा है। एक राष्ट्र की हँसियत से हम तमाम विदेशी कपड़े का बहिष्कार करने के लिए बँधे हुए हैं। परन्तु यदि इंग्लैंड और हिन्दुस्तान में सम्मान पूर्ण संधि हो जाय, अर्थात् स्थायी शान्ति हो जाय तो हमारे कपड़े की धूर्ति के लिए और स्वीकृत शर्तों पर दूसरे विदेशी वस्त्रों के मुकाबिले में मैं लज्जाशायर के कपड़े को प्रधानता देने में न हिचकिचाऊँगा। परन्तु इससे आपको कितनी सहायता मिलेगी मैं नहीं जानता। आपको

1

2

3

4

5

6

7

8

9

10

11

12

13

कुछ कारीगरों ने कहा—“हमने हिन्दुस्तानी कपड़ा बुनने की कालेज में विशेष शिक्षा पाई। हम खास हिन्दुस्तान के लिए धोती तैयार करते हैं। और आज हम वह क्यों न तैयार करें और इंग्लैंड और भारत में अच्छा रिश्ता क्यों न पैदा करें ?”

कुछ मजदूरों ने कहा—“१८६७-६८ के झकाल में हमने हिन्दुस्तान की मदद की थी। हमने गरीबों के लिए चन्दा इकट्ठा किया और उन्हें भेज दिया। हम सदा उदारनीति के पक्ष में रहे। बहिष्कार हमारे विरुद्ध क्यों होना चाहिए ?” कुछ लोगों ने तो अपना पैगम्बरिक दुःख भी गाँधीजी के सामने रखा। उसमें सबसे अधिक करुणाजनक तो यह था—

“मैं रुई का काम करनेवाला हूँ। मैं चालीस बरस तक बुनकर रहा हूँ और आज बेकार हूँ। आवश्यकता और तकलीफ़ की मुझे चिन्ता नहीं है। किन्तु मेरा अपना आत्मसम्मान चला गया है। मैं बेकारी की मदद पाता हूँ इसलिए मैं अपनी नज़रो में आप ढी गिर गया हूँ। मैं नट्टा खयाल करता कि मैं अपना जीवन आत्मसम्मान में युक्त पूरा कर सकूँगा।”

मालिक और समूह कारीगरों के लिए, जो नट्टा रविवार की लुट्टी बिताना चाहे, योर्कशायर में हाथेज पार्क में आराम गृह है। वहाँ पर बेकार लोगों के कुछ प्रतिनिधि समूहों गाँधीजी से करुणा मस्य

मिले और उन्होंने क्रिश्चियन यही बात कही और आराम गृह के माध्यम से तो एक आराम प्राप्त की। योर्कशायर की सरकार ने उन्होंने ईश्वर की इच्छा पूर्ण होना के लिए प्रार्थना की। गाँधीजी के लिए

अपना हृदय छिपाना असम्भव था । “यदि मैं आपको स्पष्ट न कहूँ तो मेरा आपके प्रति असत्याचरण होगा—मैं झूठा मित्र गिना जाऊँगा ।” गांधीजी ने पौन घण्टे तक अपना हृदय उनके सामने खोलकर रखा । उनके जीवन में अर्थशास्त्र, आचारशास्त्र और राजनीति किस तरह एकरूप हो गये हैं, इसका उन्होंने वर्णन किया । तमाम बातों के मुक्ताविले में सत्य का झण्डा उन्होंने किस तरह ऊँचा उठाया है, परिणामों से बँध जाने से उन्होंने अपने-को किस तरह रोका है, देश के सामने चरखा रखने की उन्हें किस तरह प्रेरणा हुई और दुनिया की स्थिति के कारण वे किस तरह आज की हालत में आ पहुँचे हैं इसका भी वर्णन किया । उन्होंने कहा—

“गत मार्च के महीने में मद्य और विदेशी कपड़े के बहिष्कार की स्वतन्त्रता के लिए मैंने लार्ड इर्विन के सामने प्रयत्न किया । उन्होंने सूचना की कि मैं परीक्षा के तौर पर तीन महीने के लिए बहिष्कार छोड़ दूँ और उमका फिर आरम्भ करूँ । मैंने कहा—‘मैं तो इसे तीन मिनट के लिए भी नहीं छोड़ सकता ।’ आपके यहां ३,०००,००० बेकार हैं, परन्तु हमारे यहां तो ३००,०००,००० छः महीने के लिए बेकार रहते हैं । आपके बेकारों की मदद की औसत दर ७० शिलिंग है और हमारी औसत आमदनी ७॥ शिलिंग है । उम कारीगर ने जो यह कहा कि वह अपनी नज़रों में आप गिर गया है, सच कहा है । मैं यह विश्वास करता हूँ कि मनुष्य के लिए बेकार रहना और मदद पर जीना उसे हलका बनाना है । हड़ताल के समय भी हड़ताली लोग एक दिन के लिए बेकार रहे यह मैं सहन नहीं कर सकता था और पत्थर तोड़ने, रेत ले जाने,

और सार्वजनिक सड़कों का काम उनसे लेता था और अपने साथियों से भी उसमें शामिल होने के लिए कहता था। इसलिए कल्पना करो कि ३००,०००,००० का बेकार रहना, प्रतिदिन करोड़ों का काम के अभाव में पतित होना, अपना आत्मसम्मान और ईश्वर ने श्रद्धा को खो देना, यह कितनी बड़ी आफ़त है। मैं उनके सामने ईश्वर के सन्देश को ले जाने की हिम्मत ही नहीं कर सकता। एक कुत्ते के सामने ईश्वर का सन्देश ले जाऊँ और उन भूखे करोड़ों के पास जिनकी आँखों में नूर नहीं है और रोटी ही जिनका खुदा है, उसे ले जाऊँ, तो यह दोनों ही बराबर हैं। मैं उनके पास, सिर्फ पवित्र काम का सन्देश लेकर ही—ईश्वर का सन्देश लेकर जा सकता हूँ। बढ़िया नाश्ता करके और उससे भी बढ़िया खाने की आशा रखते हुए ईश्वर की बात करना अच्छी बात है। परन्तु जिन करोड़ों को दिन में दो दफ़ा खाना भी नहीं मिलता, उनसे मैं ईश्वर की बातें कैसे कर सकता हूँ। उनको तो रोटी और मक्खन के रूप में ही ईश्वर दिखाई देगा। भारत का किसान अपनी रोटी अपनी भूमि से पाता है। मैंने उनके सामने चरखा इसलिए रखा है कि उससे वे मक्खन पा सकें। और यदि आज मैं ब्रिटिश जनता के सामने कच्छ पहनकर ही उपस्थित हुआ हूँ तो वह इसलिए, क्योंकि मैं इन अधभूखे, अर्ध-नग्न, नूक करोड़ों का एक मात्र प्रतिनिधि बनकर आया हूँ। अभी हम लोगों ने प्रार्थना की कि ईश्वर के अस्तित्व के प्रकाश में हम आनन्द करें। मैं आपसे कहता हूँ कि जब करोड़ों भूखे आपके दरवाज़े पर खड़े हैं, यह असम्भव है। आप अपने दुःखों में भी भारत की तुलना में सुखी हैं। मैं आपके सुख की ईर्ष्या नहीं करता। मैं आपका भला चाहता हूँ, परन्तु

भी आयेगा, और तब धनीतम के लिए गरीब गांववालों को कुचल डालना असम्भव हो जायगा ।”

प्र०—“क्या आप यह नहीं खयाल करते कि जैसे अमेरिका में लोग मद्य-पान की तरफ़ फिर मुड़ रहे हैं वैसे ही आपके लोग भी मिल के कपड़ों पर लौट जायेंगे ?”

उ०—“नहीं, अमेरिका में, लोगों की इच्छा के विरुद्ध एक शक्ति-शाली राष्ट्र ने मद्य-निषेध के महान् शस्त्र का प्रयोग किया था । लोग शराब पीने के आदी थे । शराब पीना वहाँ क़ैशन में शुमार हो गया था । हिन्दुस्तान में मिल का कपड़ा कभी ‘क़ैशन’ नहीं बन सका और ख़ादी तो आज क़ैशन में गिनी जाती है और सम्भावित समाज में बाखिल होने के लिए एक परवाना-त्ता बन गई है । और कुछ भी हो, मैं अपने लोगों की आर्थिक मुक्ति के लिए लड़ता रहूँगा और यह आप स्वीकार करेंगे कि इसके लिए मरना और जीना उचित ही है ।”

प्र०—“यह अनमान मुद्दा होगा । आर्थिक स्वार्थ के प्रवाह के नामने सब कुछ यह जायगा ।”

उ०—“आप कहते हैं कि धन-लेप्सा के आगे ईश्वर की हार हुई है और यही चलता रहेगा । परन्तु हिन्दुस्तान में उसकी हार न होगी ।”

कताई और बुनाई मरडल (कौटन सिनर्स एण्ड मेन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन) के अध्यक्ष सी जे. जे. जे. ने हम दिवचर सवाद में बहुतायत से भाग लिया था यह स्वीकार किया कि यह कष्ट अधिक इम्तलिह भालून होता है क्योंकि वे एक आधिक से अधिक केन्द्रित विभाग

भी आवेगा, और तब धनीवर्ग के लिए गरीब गांववालों को कुचल डालना असम्भव हो जायगा ।”

प्र०—“क्या आप यह नहीं खयाल करते कि जैसे अमेरिका में लोग मद्य-पान की तरफ़ फिर मुड़ रहे हैं वैसे ही आपके लोग भी मिल के कपड़ों पर लौट जायेंगे ?”

उ०—“नहीं, अमेरिका में, लोगों की इच्छा के विरुद्ध एक शक्ति-शाली राष्ट्र ने मद्य-निषेध के महान् शस्त्र का प्रयोग किया था । लोग शराब पीने के आदी थे । शराब पीना वहाँ फ़ैशन में शुमार हो गया था । हिन्दुस्तान में मिल का कपड़ा कभी ‘फ़ैशन’ नहीं बन सका और खादी तो आज फ़ैशन में गिनी जाती है और सम्भावित समाज में दाखिल होने के लिए एक परवाना-स्ता बन गई है । और कुछ भी हो, मैं अपने लोगों की आर्थिक मुक्ति के लिए लड़ता रहूँगा और यह आप स्वीकार करेंगे कि इसके लिए मरना और जीना उचित ही है ।”

प्र०—“यह अनमान मुद्दा होगा । आर्थिक तराई के प्रवाह के नामने सब कुछ यह जायगा ।”

उ०—“आप कहते हैं कि धन-लिप्ता के आगे ईश्वर की द्वार हुई है और यही चलता रहेगा । परन्तु हिन्दुस्तान में उनकी द्वार न होगी ।”

कताई और बुनाई मरडल (क्रेटन रिगनर्ब एण्ड मेन्युकेवचरर्स एम्प्लोयर्स) के अध्यक्ष श्री जे. जे. जे. ने, जिन्होंने इस दिलचस्प सवाद में बहुतायत से भाग लिया था यह स्वीकार किया कि यह कष्ट अधिक हमलियाँ मालूम होता है क्योंकि वे एक आधिक से अधिक केन्द्रित दिनाग

इसलिए हम कैप्टरवरी के प्राचीन गिर्जाघर की प्रभावोत्पादक उपासना में सम्मिलित हुए। उपासना के अन्त में डीन ने गोलमेज़-परिपद् के भारतीय प्रतिनिधियों के लिए प्रार्थना कर ईश्वर से याचना की कि इंगलैंड-जैसी सुव्यवस्थित स्वतन्त्रता का उपभोग कर रहा है, वैसी ही स्वतन्त्रता वह भारत को दे। दूसरी प्रार्थना में उन्होंने ईश्वर से चीन के विपत्ति-ग्रस्त करोड़ों दुखी लोगों को संकट-मुक्त करने की मांग की और जैसा कि मैंने तुरन्त ही देखा, ये प्रार्थनायें केवल शिष्टाचार-प्रदर्शन के लिए अथवा खाली शुभेच्छा की द्योतक न थी।

मैंने कहा—“आपकी बैठक की मेज़ पर रखी हुई पुस्तकों से मालूम होता है कि चीन के विषय में आपको दिलचस्पी है।” यह छोटा-सा चीन प्रश्न डीन के मन की बात निकाल लेने के लिए काफी था। उन्होंने अत्यन्त भावुकता के साथ कहा—“हाँ,

मैंने चीन के सम्बन्ध में अध्ययन किया है, किन्तु चीन पर जो संकट आ पड़ा है, उसमें चीन का तत्काल अभ्यास करने की आवश्यकता है, और हम आगामी वसन्त ऋतु में वहाँ जाने की योजना कर रहे हैं। मुझे आशा है कि डा० स्विट्जर और डा० ग्रेनफिल वहाँ होंगे और चार्ली एयड्यूज और हम वहाँ जावेंगे। वाइ मे इवे हुए भाग का क्षेत्रफल ब्रिटिश टापुओं के क्षेत्रफल के बराबर है, कराँइ में अधिक लोग संकट-ग्रस्त हैं, और करीब एक कराँइ के मर गये हैं। हमें वहाँ जाकर वहाँ की स्थिति को प्रत्यक्ष देखना है और यदि सम्भव हो सके तो मारे मरार का ध्यान उन ओर आकर्षित करना है।”

मैंने पूछा—“क्या आप वहाँ की राजनैतिक स्थिति का भी अध्ययन

इसलिए हम कैटरबरी के प्राचीन गिरजाघर की प्रभावोत्पादक उपासना में सम्मिलित हुए। उपासना के अन्त में डीन ने गोलमेज़-परिपद् के भारतीय प्रतिनिधियों के लिए प्रार्थना कर ईश्वर से याचना की कि इंगलैंड-जैसी सुव्यवस्थित स्वतन्त्रता का उपभोग कर रहा है, वैसी ही स्वतन्त्रता वह भारत को दे। दूसरी प्रार्थना में उन्होंने ईश्वर से चीन के विपत्ति-ग्रस्त करोड़ों दुखी लोगों को संकट-मुक्त करने की मांग की और जैसा कि मैंने तुरन्त ही देखा, ये प्रार्थनायें केवल शिष्टाचार-प्रदर्शन के लिए अथवा खाली शुभेच्छा की शोतक न थी।

मैंने कहा—“आपकी बैठक की मेज़ पर रखी हुई पुस्तकों से मालूम होता है कि चीन के विषय में आपको दिलचस्पी है।” यह छोटा-सा

चीन प्रश्न डीन के मन की बात निकाल लेने के लिए काफ़ी

था। उन्होंने अत्यन्त भावुकता के साथ कहा—“हाँ, मैंने चीन के सम्बन्ध में अध्ययन किया है, किन्तु चीन पर जो संकट आ पड़ा है, उससे चीन का तत्काल अभ्यास करने की आवश्यकता है, और हम आगामी वसन्तः ऋतु में वहाँ जाने की योजना कर रहे हैं। मुझे आशा है कि डा० स्विट्ज़र और डा० ग्रेनफिल वहाँ होंगे और चार्ल्स एण्ड्रयूज़ और हम वहाँ जावेंगे। राढ़ में झूथे हुए भाग का क्षेत्रफल ब्रिटिश टापुओं के क्षेत्रफल के बराबर है, करोड़ों से अधिक लोग संकट-ग्रस्त हैं, और करीब एक करोड़ के मर गये हैं। हमें वहाँ जाकर वहाँ की स्थिति को प्रत्यक्ष देखना है और यदि सम्भव हो सके तो सारे संसार का ध्यान उस ओर आकर्षित करना है।”

मैंने पूछा—“क्या आप वहाँ की राजनैतिक स्थिति का भी अध्ययन

(इंग्लैंडवालों) ने उनपर जो अत्याचार एवम् पाशविकतायें कीं तथा शराब के द्वारा उन्हें नीति-भ्रष्ट करके जो पाप किया, उसके प्रायश्चित्त के रूप में कुछ करना चाहिए। उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई भी प्रायश्चित्त इसके लिए काफ़ी नहीं है, इसलिए उन्होंने अपने-आपको रोग, खतरों और मृत्यु के बीचोंबीच में फेंक दिया।”

उनकी मेज पर पड़ी हुई बस्ट्रेण्ड रसल की चीन-सम्बन्धी पुस्तक का मैंने जिक्र किया, इसपर डीन बस्ट्रेण्ड रसल के सम्बन्ध में कुछ कहने लगे और इसी प्रसंग में अपने सम्बन्ध में भी उन्हें कुछ कहना पड़ा। उन्होंने कहा—“हां, हां, मैं बस्ट्रेण्ड रसल को अच्छी

तरह जानता हूँ। रूस की क्रान्ति के समय मैंने इनसे मेंचेस्टर में रूस के सम्बन्ध में भाषण करवाया था और इस प्रकार मैं तात्कालिक क्रांती अधिकारियों का संदेह-भाजन बन गया था; हमारी सभा में सैनिक मौजूद थे। मैं यह अनुभव करता था कि रूसवाले जो कर रहे हैं, वह ठीक हैं। यह कहा जाता था कि उन्होंने धर्म तथा ईसाइयत का परित्याग कर दिया है। मुझे इसकी परवा न थी, क्योंकि मैं यह ग्रास दे रहा था, कि वे जो कहते हैं, उसकी अपेक्षा वे जो करते हैं, उसका महत्व अधिक है। और शरीरों तथा पीढ़ियों के लिए वे जो समास कर रहे हैं और वे जिस तरह यह व्यापक कर रहे हैं वे जीवन की सत्य सुविधायें ऊपर में नीचे तक सबको समान रूप से मिलनी चाहियें, इसके अधिक ईसा की आत्मा के अनन्य और सदा ही सत्य है। जिस ज्ञान से ‘प्रभु-प्रभु’ कहनेवाला व्यक्ति कहता है कि मैं, मैं-ता ऊपर से तो ‘प्रभु’ की इच्छा को समझता हूँ, परन्तु वह कहनेवाला कहता है कि मैं

“किन्तु जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मैं तो कीटक हूँ, मनुष्य हूँ। मानव-समुदाय-द्वारा तिरस्कृत और लोगों-द्वारा बहिष्कृत हूँ।

“मुझे देखनेवाले सब मेरी ओर तिरस्कारपूर्वक हँसते हैं; वे होठ लम्बे करके, सिर हिलाकर कहते हैं कि इसने ईश्वर पर विश्वास किया था कि वह इनका उद्धार करेंगे; ईश्वर को यदि इसकी आवश्यकता हो तो इसका उद्धार करे।”

इसके बाद—“मैं मृत्यु की घाटी में चलता होऊँ तो भी मुझे किसी प्रकार का भय नहीं, क्योंकि हे प्रभु, तू मेरा साथी है; तेरी सोटी और तेरा दरुड मुझे सुखदायक है।”

और डीन ने भजन की इन अंतिम पंक्तियों को दुहराया और वे बोले—“बहुत से लोग मुझसे पूछते थे कि क्या तुम गांधी को ईसाई बनानेवाले हो ?” मैंने रोषपूर्वक उनसे कहा—“इन्हें ईसाई बनाया जाय ! ईसा के समान जितना जीवन इनका है, वैसे मैंने दूसरे का बहुत-कम देखा है।”

मैंने उन्हें वाद दिलाया, “किसी ने कहा है कि धर्म आकर्षक है; किन्तु चर्च (धर्म-संघ) पीछे हटानेवाला है; और ये मित्र धर्म का वास्तविक मर्म नहीं समझते।”

डीन ने कहा—“यह बड़ा आकर्षक वाक्य है। मुझे आश्चर्य है पर किसने कहा होगा।” किन्तु तुरन्त ही उन्होंने सम्भालते हुए कहा—

“और विकास और सुधार की सब प्रगतियाँ चर्च (धर्म-संघ) के लोगों के पास से ही आनी चाहिए और आ सकती हैं।

मेरे लिए चर्च बूढ़ की छाल के समान है। छाल का काम रक्षा करने

भागकर आये हुए फ्रांसीसी प्रेसवीटेरियनों को शान्तिपूर्वक प्रार्थना करने की स्वतन्त्रता थी। वहाँ ह्यूबर्ट वाल्टर की कब्र है, जो क्लूसेड में शामिल हुआ, और तुर्क सुल्तान उसे बहुत नम्र प्रतीत हुआ। कब्र पर आप सुल्तान का सिर देखेंगे, और यद्यपि दूसरे तीन-चार सिर बिगाड़ अथवा मिट गये हैं, किन्तु मुझे खुशी है कि यह बाक़ी रह गया है।”

रात को वह ज़मीन पर बैठकर गांधीजी को चर्खा कातते हुए देखने लगे और कहा—“लोग कहते हैं कि गांधीजी मशीनों का तिरस्कार करते हैं, किन्तु यह तो ऐसा नाजुक यन्त्र है, जैसा मनुष्य मशीन के लिये है, मैंने पहले कभी नहीं देखा और मैं इसके नहीं बना है ?

मृत के बने कपड़े पहनना बहुत पसंद करूँगा।” अखबारवालों ने तो उन्होंने पहले ही कह दिया था कि गांधीजी के मशीन (यन्त्र) सम्बन्धी विचारों के विषय में बड़ी ग़लतफ़हमी फैला दी गई है। मशीनों ने मनुष्य को गुलाम न बनाना चाहिये, यह एक बात है, और मशीनों ने आदमियों को बेकार और दरिद्र नहीं बनाना चाहिये यह दूसरी। क्योंकि मशीनों ने भारत के करोड़ों लोग दरिद्र हो गये हैं, इसीलिए गांधीजी उनसे फिर चर्खा सम्भालने के लिए कहते हैं।

जब कि वह बातें कर रहे थे, एक बार उनका हृदय फिर चीन के विपत्ति-ग्रस्त लोगों की ओर खिन्ना उन्होंने कहा—“महामात्र, मैं समझता हूँ कि जब हम चीन के आयेगे, आपका आशीर्वाद हमें प्राप्त होगा।” डॉन जो कुछ कहते हैं और करते हैं, उसमें उनका सेवा-वृत्त प्रकट होता है। और इस सेवा-वृत्ति का मूल उद्गम जितना इनका ईश्वर के प्रति भक्ति है, वदाचित्त उतना ही उनका सेवा-समर्पण भली के साथ

: ७ :

किंगस्ली-हॉल से लगा हुआ बच्चों का एक वसतिगृह है। जिस बच्चे ने गांधीजी को 'बच्चा गांधी' का प्यारा नाम दिया है वह उसीमें 'बच्चा गांधी' रहनेवाला एक तीन बरस का बच्चा है। जबसे बच्चों ने गांधीजी को देखा है, तबसे वे रात-दिन उन्हीं का विचार करते हैं। "अम्मा ! अब मुझे यह कह कि गांधी क्या खाते हैं और वे जूते क्यों नहीं पहनते ?" और ऐसे कई प्रश्न पूछते हैं। एक दिन मां ने कहा—“नहीं, देखो, उन्हें गांधी नहीं, गांधीजी कहना चाहिए। तुम जानते हो कि गांधीजी बहुत भले हैं।” छोटे बच्चे ने अपनी भूल सुधारते हुए कहा—“अम्मा, मैं अफ़सोस करता हूँ। अब मैं उन्हें 'बच्चा गांधी' कहूँगा।” ईश्वर की भी यही दशा हुई थी और उसे भी 'बच्चा ईश्वर' कहा जाता है। परन्तु वह कहानी मैं छोड़ दूँगा, क्योंकि उसका मेरी इस कहानी से कोई सम्बन्ध नहीं है। अब यह नाम चल पड़ा और उनके जन्मदिन के उपलक्ष्य में छोटे बच्चों ने 'प्यारे बच्चा गांधी' को खिलौने और मिठाई की भेंट भेजी। और लिखा—“यह जन्मदिन आप को नुसारिक हो ! क्या अपने जन्मदिन के रोज़ आर .यहाँ आयेंगे ! हम बाजा बजायेंगे और गीत गावेंगे।”

“अलीनी का संत फ्रांसिस अमीनी का छोटा गरीब आदमी गिना जाता था। वह सब तरह ने गांधीजी जैसा ही था।

“वे दोनों ही कदरत को, जैसे कि बच्चे, चिट्ठियों और फूलों को चाहते हैं, चाहते थे। गांधीजी कच्छ पहनते हैं उसी तरह संत फ्रांसिस भी, जब इन पृथ्वी पर थे, कच्छ पहनते थे।

“गांधी और संत फ्रांसिस धनवान व्यापारी के पुत्र थे। एक रात को जब संत फ्रांसिस अपने अनुयायियों के साथ दावत में थे, उन्हें इटली के गरीबों का खयाल हुआ। वह बाहर दौड़ गये, अपने कोमती कपड़ों का उन्होंने त्याग किया, अपना धन गरीबों को दे डाला और गांधी-जैसे पुराने कपड़े पहन लिये।

“संत फ्रांसिस ने कुछ अनुयायी अपने साथ लिये। उन्होंने वृक्षों की कोरड़ियाँ बनाईं। गांधीजी ने भी यही बात की। उन्होंने अपना धनी वैभवशाली जीवन गरीब भारतीय लोगों पर न्यौछावर कर दिया।

“गांधीजी के लोगों ने उन्हें लन्दन आने के लिए कपड़ा दिया। जैसा कि हम बच्चों को, जो किंगस्ली-हॉल को जाते हैं, उन्होंने कहा, उनके पान उसे खरादने के लिए काफी पैसा नहीं है।

“वह सोमवार के दिन मौन रखते हैं, क्योंकि यह उनका धर्म है। गांधीजी को उनके जन्मादिन के उरलक्षर में खिलौने, मंगवत्तियाँ और मिठाई की भेंट मिलती है। वह बकरी का दूध मूगफलों और फल खाकर रहते हैं।”

एक दूसरा नियन्ध है, जो एक दस बरस के लड़के ने लिखा है। उने ज्यों-का-त्यों यहाँ देता हूँ—

उन्लू० ए० आर्द० मेविली, २१ ईंगलिन रोड,

याऊ, लन्दन, ई० ३ ३०-६-३१-१।

कुछ पत्रकार जो नौकानेवाली कमानियां गढ़ आते हैं और मन चाहा जटपटंग लिए आते हैं, उनके सामने यह कैसा मया और श्रमूल्प है !

मुझे यह कहना चाहिए कि उनके शिक्षक उन्हें जो सिखाते हैं और गांधीजी के सन्दन्ध से वे जो-कुछ सीखते हैं उसका यह परिणाम है।

इसके दिलकुल विपरीत, लन्दन से ४० मील दूर एक गांव की शाला का, जहां मैं श्री ब्रेत्स्फर्ड के साथ गया था, यह चित्र है। मैंने वहाँ के विद्यार्थियों से पूछा—“मैं जिस देश से आया हूँ उस देश का नाम लो।”

कुछ लण चुप्पी रही, परन्तु आखिर को शिक्षक की पांच साल की लड़की ने कहा—“हयशी के मुलक से।” उसके पास बैठे हुए उनसे कुछ बड़े लड़के को यह सुनकर आघात पहुंचा, उनसे उनके कान में कहा, “यह काला नहीं है, यह तो हिन्दुस्तानी है। एक-दूसरे वर्ग में ब्रेत्स्फर्ड ने नक्शे में हिन्दुस्तान बताने के लिए कहा। उन्होंने हिन्दुस्तान ठीक बताया, परन्तु शिक्षक ने फौरन ही उनके ज्ञान में वृद्धि की, “यह देश हमारे क्लष्टे के नांचे है और यह सज्जन अपने लोगों के लिए एक माँगने आये है।” उन बच्चों ने गांधी का नाम नहीं सुना था, परन्तु बाद में मैंने यह ज्ञान लिया कि जिन लड़के ने उस लड़की के कान में कहा था और उसकी मूल सुधारों था वह एक मजदूर स्त्री का लड़का है। वह अखबार पढ़ती है और उसे गांधीजी के प्रति बड़ा आदर है।

: ८ :

ब्रेल्ल०—जब आप नमक-कर को उठा देंगे, तब इतते आमदनी
 एन० एन० ब्रेल्लफर्ड में हुई घटी को पूरा करने के लिए क्या
 उपाय करेंगे ?

गॉ०—नमक-कर तो एक मामूली बात है; वास्तव में मुख्य प्रश्न
 तो ताड़ी और अफ्रीम की ज़कात का है। वस्तुतः यह आय का एक
 बड़ा अंश है। इस गढ़े को पूरा करने का कोई उपाय नहीं है, यदि हम
 सेना के व्यय में कमी न करें। यह सैनिक व्यय-रूपी राक्षस ही हमारा
 गला घोटकर हमें मारे डाल रहा है। इस भयङ्कर अर्थ-प्रवाह का अन्त
 अवश्य ही होना चाहिए।

ब्रे०—मैं खयाल करता हूँ कि गोलमेज-परिषद् का यह मुख्य
 विषय होगा।

गॉ०—अवश्य ही यह उसका मुख्य विषय होगा। हम इसे छोड़
 नहीं सकते।

कलावार तब क्या आप गौरी सेना को नवम्बर बाहर करना
 चाहते हैं ?

गॉ०—अवश्य ही मैं उसे हटा देना चाहता हूँ।

गांधीजी (प्रसन्नतापूर्वक)—हां, समस्या का यह हल हो सकता है; किन्तु जब सेना घटाई जायगी, तो मुझे भय है कि इससे आपके बेकारों की संख्या में और वृद्धि होगी।

ब्रे०—तब, यदि सेना पर भारत के अधिकार का सिद्धान्त स्वीकार कर लिया जाय तो क्या आप कुछ वर्षों के लिए जितनी घटाई हुई गोरी सेना रखना पसन्द करेंगे, उसकी संख्या और खर्च के बारे में शर्तें तै करने पर रज़ामन्द होंगे ?

गांधी०—हां, इस तरह की किसी भी बात पर रज़ामन्द हो सकते हैं, बशर्ते कि वह बात भारत के हित में हो।

ब्रे०—मैं समझता हूँ वह आपकी अपेक्षा अधिकतर हमारे हित में होगी।

गांधीजी (हँसते हुए)—फिर भी, हम उस पर रज़ामन्द हो जायँगे।

ब्रे०—यह अधिकार का सिद्धान्त ही कठिनाई पैदा कर रहा है। मैं नहीं समझता कि आपको वह अधिकार मिल जायगा। सेना की कमी का दूसरा प्रश्न है; एक हद तक आपको वह मिल जायगा। इस समय हम निःशस्त्रीकरण परिपद् में जा रहे हैं। संसार के निःशस्त्रीकरण में हमारे हिस्से का यह भाग हो सकता है।

गांधी०—मैंने बता दिया है कि मैं क्या चाहता हूँ। मेरी शर्तें प्रकट हैं। किन्तु सरकार पक्ष में कार्रवाई कर रही है मानों वह यह बताने से डरती है, कि वह क्या देना चाहती है। किन्तु मैं प्रतीक्षा करने के लिए सर्वदा तैयार हूँ।

ब्रे०—जब कि हम अपनी आर्थिक समस्याओं में उलझे हुए हैं,

गाँ०—इसके लिए 'शिष्टता' शब्द ठीक नहीं है। इसकी अपेक्षा यह कहिए 'लुद्र पारतन्त्र्य' अर्थात् नीच गुलामी। उनमें से एक भी अपनी आत्मा को अपनी नहीं कह सकता। निज़ाम कुछ कल्पना या उपाय सोच सकते हैं। किन्तु वाइसराय का क्रोध से मरा एक पत्र उन्हें ठंडा कर देने के लिए काफी है। लार्ड रीडिंग के शासन-काल में जो कुछ हुआ वह आप जानते ही हैं।

ब्रे०—अधिकार अथवा नियन्त्रण के इस प्रश्न के अलावा, यदि संघ व्यवस्थापक सभा के सदस्यों में ४० प्रतिशत सदस्य देशी नरेशों द्वारा निर्वाचित हों, तो क्या आपके 'लाखों' अध-भूखों के हित की कोई व्यवस्था हो सकने की आशा है ?

गाँ०—जिस तरह हम आपसे निपटेंगे, उसी तरह हम उनसे (देशी नरेशों से) भी निपट लेंगे। बल्कि उनसे निपटना कहीं अधिक आसान होगा।

ब्रे—मेरा खयाल है कि उनका जवाब कहीं अधिक पाशविक होगा। हमने तो लाठी का ही इस्तेमाल किया है; किन्तु वे बन्दूक का इस्तेमाल करेंगे।

गाँ०—यह आपका जार्तीय अभिमान है। यह ठीक है, इसके लिए मैं आपकी सराहना करता हूँ। हम सबको यह अभिमान होना चाहिए। किन्तु आप इस बात को अनुभव नहीं करते कि भारत में ब्रिटिश शक्ति प्रतिष्ठा पर कितनी निर्भर रहती है। भारतीय इससे सम्मोहित हो गये हैं। आप एक बहादुर जाति हैं और आपकी प्रतिष्ठा आपको हम पर धाक जमाने में समर्थ बना देती है। यही बात मैंने दक्षिण

अफ्रिका में देखी है। जुलू एक लड़ाकू जाति है, लेकिन फिर भी एक जुलू रिवाल्वर को देखते ही, चाहे वह खाली ही क्यों न हो, कांपने लग जायगा। यदि नरेशों से हमारा झगड़ा हो तो उन्हें आपकी प्रतिष्ठा का लाभ न पहुँचेगा। यदि हमारे लोगों को मराठा फ़ौज का मुकाबिला करना पड़े तो हम अपने-आपको कहेंगे—“हम भी मराठे हैं।” दक्षिण अफ्रिका की चर्चा करते हुए मुझे देशी नरेशों के साथ के सम्बन्ध में हम जो परिवर्तन करना चाहते हैं, इसके लिए एक उदाहरण याद आ गया। स्वाज़ीलैंड पर पार्लमेण्ट का नियंत्रण रहा करता था, किन्तु जब यूनियन का निर्माण हुआ तो वह नियंत्रण उसके हाथों सौंप दिया गया। इसी तरह हमारी यह दलील है कि नरेशों को भारतीय शासन के नियंत्रण में सौंप दिया जाय।

“एक पूर्व निश्चित कार्यक्रम के कारण बुद्धबुक के आज—रविवार के तीसरे पहर के इस सम्मेलन के सभापति का शासन ग्रहण न कर सकने के कारण ‘फ्रांसीसियों के शब्दों में’ मैं अपने को उजड़ा हुआ सा पाता हूँ, क्योंकि आज मैं बरमिबम निवासी आपके अनेक मित्रों और प्रशंसकों की ओर से आपका स्वागत करने के सुयोग से वञ्चित होगया हूँ।

“इंग्लैंड के बहुत-से लोग आपको नहीं समझते और जब कि हम आपको समझते हैं, या जिनकी धारणा है कि समझते हैं, तो सदा आप के अनुगामी होने में अपने-आपको अस्मर्थ पाते हैं, परन्तु ईश्वर की धन्यवाद है कि जिसने भारत के इतिहास के इन कठिन समय और संसार की इस विषम अवस्था में आप-जैसा नैतिक शक्ति-सम्पन्न पैगम्बर पैदा किया है। आप पर हम समय जो जम्मेदारी है, हम कुछ अशों में उसे समझते हैं, और अपने इस महान कार्य के लिए आपको जिस शक्ति की आवश्यकता है, यदि आपको बुद्धबुक में एक दिन शान्ति का दिताने में उस शान के कायम रखने में मदद मिलती हो तो हम अपने-को धन्य समझेंगे। हमारा आभार है कि जिस पारम्पर में आप इतना पारश्चम कर रहे हैं, उसमें भारत और इंग्लैंड तथा हिन्दू और मुसलमानों के बीच ऐसा समझौता हो जाय कि जिससे भारतीय राष्ट्रवाद के जीवन आदर्शों का पूरा हो सके।

“हमें ऐसा समझते हैं कि आपका इरादा भी है कि इसमें आपका किसानों के मन्दपत्र का उत्थान का आभार का पूरा होगा। हम आप के जीवन और कार्य में जो मदद कर सकें, उसकी कोशिश करेंगे। हम आपकी आवश्यकता का पूर्ण समर्थन करेंगे। हम आपकी कसब तैयार हैं, जी।

ने "निवृत्ते पुरुष के सिर पर शैतान सवार रहता है" इस पुरानी कहावत की पाद दिताते हुए कहा कि मुझे विश्वास नहीं है कि मनुष्य अपना अवकाश का समय लाभदायक बातों के चिन्तन में व्यतीत करेगा। इस पर विशप ने कहा—“देखिए, मैं दिन-भर में मुश्किल से एक घण्टा काम करता हूँ, बाकी सब समय मानसिक चिन्तन में बीतता है।” गांधीजी ने इसके उत्तर में हँसते हुए कहा कि “यदि सब मनुष्य विशप हो जायें तो विशपों का धन्धा ही जाता रहेगा।”

डा० पारधी और उनकी धर्मपत्नी ने बर्मिंघम के सब भारतीयों को गांधीजी से मिलने के लिए अपने घर पर निमन्त्रित किया था, वहाँ

चार आना तोड़ हमने करीब एक घंटा बिताया। डा० पारधी प्रायः

तीस वर्ष पूर्व इङ्गलैंड आये और अपने निर्वाह के

लिए परिश्रम करते हुए भी एफ० आर० सी० एल० की परीक्षा पास की

और केवल अपने परिश्रम और गुणों के दल पर शल्य चिकित्सा अर्थात्

सर्जरी में इतना नाम उन्होंने कमाया है। उनकी धर्मपत्नी एक अँग्रेज

महिला है और वह वहाँ रहकर भी भारत के विषय में दिलचस्पी रख

कर कुछ-कुछ सेवा करने में प्रयत्नशील रहती हैं। इससे वहाँ मित्रों

के संदेश देने के आग्रह पर गांधीजी ने एक ही उत्तर में कहा—“आप

इङ्गलैंड में रहनेवाले मुझे सब बातों पर भारत की गति-विकास का

आर है, जब आप सर्वत्र रहकर कार्य करें।” इससे अत्यन्त संतुष्ट

मैंने एक से पूछा कि हम भारत का सेवा किस तरह कर सकें हैं। उत्तर

में गांधीजी ने कहा—“आप अपना सब दिल, शक्ति और दैवी कर्मों

में अन्तर्गत के बकाय देश की सेवा में लगा दें। यह आदर प्राप्त है।

को उसकी इच्छा के विरुद्ध कोई कार्य करने के लिए बाध्य भी नहीं करूँगा। पूर्व इसके कि इंग्लैंड वस्तुतः अधिकार त्याग करे, यह आवश्यक है कि उसे यह निश्चय हो जाय कि भारत स्वतन्त्रता प्राप्त करे और इंग्लैंड इसके लिए नुके इसीमें उत्तका हित है।”

श्रीमती पारधीने कहा—“क्या आप यह खयाल नहीं करते कि इंग्लैंड को यह निश्चय कराने के लिए आपको कुछ समय यहाँ रहना चाहिए ?”

गांधीजी ने कहा—“नहीं, मैं नियत समय से अधिक नहीं ठहर सकता। यदि मैं अधिक समय तक ठहरूँ तो यहाँ मेरा कुछ भी असर न रहेगा और लोग इधर तबज्जह भी कम देने लगेंगे। अभी मेरा जो असर होता है, वह केवल तात्कालिक है, स्थायी नहीं। मेरा स्थान तो भारत में अपने देशवासियों के बीच है और सम्भव है उन्हें एक बार फिर कष्ट-सहन का सन्तान आरम्भ करना पड़े। वस्तुतः अंग्रेज़ इस बात को जानते हैं कि मैं एक पीड़ित जनता का प्रतिनिधि हूँ और इसीसे वे मेरी बातों पर ध्यान देने दिखाई देने हैं और जब मैं भारत में अपने देशवासियों के साथ कष्ट सहन होऊँगा, तब वहाँ मैं जो कुछ कहूँगा वह ऐसा होगा जैसे हृदय-में हृदय की बात होता है।

श्री क्लोल्म स्टेनर के बाल सुधारक शस्त्रालय का मलाकात का वर्णन भी मैं यहाँ अवश्य करूँगा। क्लोल्म स्टेनर का जन्म १८२५

म. १। देहान्त १८७० हुआ है। उनके शिष्य सुधारक शस्त्रालय में नव्य समस्या को चलाने का प्रयत्न कर रहे

हैं। उनका उद्देश्य मानव हृदय का आधर रहन और सर्वका आधर बन करने तथा समाज में विकास में अन्तर्गत रहन का दावा करने का है।

कि ये हीन-अज्ञ बालक हैं। शाम को गाँधीजी के आग मन के उपलक्ष्य में उनके खेल हुए, किन्तु उन्हें हम देख न सके। दुर्भाग्य से समय-अभाव के कारण इस संस्था का हमारा अध्ययन सीमित ही रहा; परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस संस्था का भविष्य उज्ज्वल है और यह स्थान नवोपनिषद्वादी तथा शिक्षकों के अध्ययन करने योग्य है।

बुद्धि-कालमें जो बृहद् सभा हुई, उसमें अनेक संस्थाओं के प्रतिनिधि आये थे। गाँधीजी ने अपने भाषण में कहा—“अन्य स्थानों पर तो मैं कार्यवश और अपना सन्देश सुनाने गया हूँ; परन्तु यहाँ मैं तीर्थ-यात्रा समझकर आया हूँ—तीर्थ-यात्रा इसलिए कि इसी संस्था ने हमारे सकट के समय श्री होरेश एलेक्जेंडर जैसे सुहृद् को हमारे पास भेजा था। वह ऐसा समय था कि जब सत्याग्रह के समाचार सरकार द्वारा रोक लिये जाने के कारण बाहर नहीं पहुँच सकते थे और मुख्य-मन्त्र्य सब नेता जेलों में बन्द थे। ऐसे कठिन समय में क्वेकर समीति ने भारत में अपनी प्रतिनिधि भेजना निश्चित किया और श्री एलेक्जेंडर को इस कार्य के लिए चुना। केवल आपने ही नहीं किन्तु उनकी ‘बारेला’ भी सब ने भी उनकी महत्ता को ही आकाश दे दिया। इससे आप समझ सकते हैं कि यह स्थान मेरे लिए तीर्थ-यात्रा क्यों है।

“आपने कार्य के समय में अपना कार्य में आपका समय नहीं लेना चाहता। कार्यवश मैं आपका समय ले रहा हूँ। यह सत्य है। यह सत्य महामना—वैदिक की देश-प्रेम का भाव है। आपका स्वतन्त्रता प्राप्त के लिए बलिदान का भाव है। यह हमारे ही सत्य का उपयोग किया है। यह आपका भाव है। यह ही सत्य का भाव है।

हैं कि गत वर्ष जनता ने उस साधन को कहाँ तक निभाया । मैं आपसे यह बात ज़ोर देकर कहना चाहता हूँ कि यदि गोलमेज़-परिपद् के वर्तमान चालू काम को सफल करना हो तो वह बुद्धिशाली लोकमत का दबाव पड़ने पर ही हो सकता है । मैंने अक्सर यह कहा है कि मेरा असली काम परिपद् में नहीं उससे बाहर है । अपने कुछ सार्वजनिक भाषणों में मैंने बिना किसी संकोच के कहा है कि परिपद् में कुछ भी काम नहीं हो रहा है, वह व्यर्थ ही समय बिता रही है और जो लोग हिन्दुस्तान से आये हुए हैं उनका और साथ ही परिपद् के अंग्रेज़ प्रतिनिधियों का बहुमूल्य समय बरबाद किया जा रहा है । मेरी यह राय होने से, भारतवासी जो संग्राम भारी कठिनाइयों का सामना करते हुए लड़ रहे हैं, ब्रिटिश-द्वीप के लोकमत के ज़िम्मेवर नेताओं को वह समझ लेना चाहिए । क्योंकि जबतक आप लोग इस आन्दोलन का सच्चा स्वरूप और इसका रहस्य न समझ लेंगे तबतक यहां के शासन-तन्त्र-संचालकों पर आप दबाव नहीं डाल सकते । मैं जानता हूँ कि इस सभा में आये हुए आप सब लोग सत्य के सच्चे शोधक हैं, और इसी कार्य में नहीं, प्रत्युत् मानव-समुदाय की सहायता की अपेक्षा रखनेवाले सभी कार्यों के प्रति सत्यमार्ग ग्रहण करने के लिए आतुर हैं, और यदि आप इस प्रश्न को उक्त दृष्टि-बिन्दु से देखेंगे तो बहुत सम्भव है कि गोलमेज़-परिपद् का काम सफल हो जाय ।”

भाषण के अन्त में गाँधीजी से पूछे गये प्रश्नों में एक प्रश्न यह था कि ‘क्या स्वयं भारतीय प्रतिनिधि साम्प्रदायिक भेदभाव की नीति प्रश्न पर आपस में सहमत न होकर समझौते को असम्भव नहीं बना रहे हैं ?’ गाँधीजी ने इस सूचना का ज़ोरों से इनकार

करते हुए कहा—“मैं जानता हूँ कि आपको इसी प्रकार विचार करना सिखाया गया है। इस मोहक सूचना के जादू के असर को आप दूर नहीं कर सकते। मेरा दावा यह है कि विदेशी शासकों ने ‘फूट डाल-कर शासन करने’ की भेद-नीति से भारत पर शासन किया है। यदि शासकों ने वारांगना की तरह आज एक दल से और कल दूसरे से गठजोड़ा करने की नीति इस्तिफार न की होती तो भारत पर कोई भी विदेशी साम्राज्यवादी हुक्मत चल नहीं सकती थी। विदेशी शासन का फचर जयतक मौजूद है और गहरे-से-गहरा उतरता जाता है, तबतक हमारे में फूट बनी ही रहेगी। फचर का त्वभाव ही यह है। फचर को निकाल डालिए और चिरे या फटे हुए दोनों हिस्से इकट्ठे होकर मिल जायेंगे। फिर त्वयं परिषद् के वर्तमान संगठन के कारण भी जनता का काम अत्यन्त कठिन हो गया: क्योंकि यहाँ आये हुए सब प्रतिनिधि सरकार द्वारा नामज़द किये हुए हैं। उदाहरणार्थ, यदि राष्ट्रीय-दल के मुसलमानों से अपना प्रतिनिधि चुनने के लिए कहा जाता तो डा० अन्सारी चुने जाते। अन्त में हमें यह भी न भूलना चाहिए कि यदि ये ही प्रतिनिधि जनता द्वारा निर्वाचित होते तो अधिक ज़िम्मेदारी के साथ काम करते। किन्तु हम तो यहाँ प्रधान मन्त्री की कृपा में आये हुए हैं। हम न तो किसी के प्रांत ज़िम्मेदार हैं, न किसी निर्वाचक-मण्डल से हमें प्रार्थना या अपील करनी है। फिर हमें कहा जाता है कि यदि हम साम्प्रदायिक प्रश्न या आपस में निरटारा न कर लेंगे तो किसी प्रकार की प्रगति न हो सकेगी। इसलिए स्वभावतः ही प्रत्येक अपनी ओर खिंचता है। और अर्थात्-अधिक जितना सम्भव हो उबर-उठती

“मैक्स गालियन” में उसके सम्पादकात्ता ने लिखा था कि गांधी जी को अछूतों को श्राव में रोजने का क्या अधिकार है, क्योंकि वे स्वयं ब्राह्मण वर्ग के हैं, जो अछूतों को अभी तक दयाता नला आया है। एक मित्र ने इस लेख का हवाला देते हुए गांधीजी से पूछा कि “इस प्रकार क्या वे स्वयं ही समझौते के मार्ग में विघ्न-रूप नहीं हैं ?” उत्तर में गांधीजी ने कहा—“मैं कभी यह न जानता था कि मैं ब्राह्मण हूँ; हाँ, मैं बनिया अवश्य हूँ, और यह शब्द एक प्रकार का तिरस्कार-सूचक है। किन्तु मैं भोतावर्ग को बला देना चाहता हूँ कि ४० वर्ष पहले जब मैं विलायत आया था, तब से मेरी जातिवालों ने मुझे बहिष्कृत कर दिया है, और मैं जो काम कर रहा हूँ, उससे मुझे अपने को किसान, उलाहा और अछूत कहलाने का अधिकार प्राप्त है। मैंने अपनी पत्नी से विवाह किया उससे बहुत पहले ही मैंने अस्पृश्यता निवारण के कार्य को अपना लिया था। हमारे समुक्त जीवन में दो बार ऐसे प्रसंग आये हैं, जिनमें मुझे अछूतों के लिए काम करने और अपनी पत्नी के साथ रहने इन दो बातों में से एक को चुन लेने का प्रश्न उपस्थित हो गया था और इनमें मैं पहली को ही पसन्द करता; किन्तु मेरी नेकदिल पत्नी को धन्यवाद है कि उसके कारण वह कठिन प्रसंग टल गया। मेरे आश्रम में, जोकि मेरा कुटुम्ब है, कई अछूत हैं और एक मधुर किन्तु नटखट बालिका मेरी लड़की की तरह रहती है। रही यह बात कि मैं समझौते में विघ्न-रूप हूँ, तो मैं स्वीकार करता हूँ कि इस कारण विघ्न-रूप हूँ कि भारत के लिए वास्तविक पूर्ण स्वराज्य से कम स्वीकार करके समझौता करने के लिए मैं ज़रा भी तैयार नहीं हूँ।”

रॉलेट आया और जगमें दूद पड़ा, और बाद को जब मुझे 'प्लूरिसी' बीबीनारी बढ़ जाने में विवश होकर हिन्दुस्तान को जाना पड़ा तो वहाँ जाकर भी मैंने अपनी जिन्दगी तक को हातरे में डालकर रंगरूट भरती करने का काम किया, जिसे देखाकर मेरे कई मित्र कांप उठे थे। सन् १९१६ में जब रॉलेट ऐक्ट नामधारी काला कानून पास हुआ और प्रभावित अन्धायों के दूर करने की हमारी साधारण प्राथमिक मांग तक को पूरा करने से सरकार ने इनकार कर दिया, तब मेरी आंखें खुलीं और भ्रम दूर हुआ। और इसलिए सन् १९२० में मैं बागी बना। तब से मेरी यह प्रतीति बढ़ती ही गई है कि जनता की प्रधान महत्त्व की यत्नाएँ केवल बुद्धि को अपील करने अर्थात् समझाने-बुझाने से नहीं मिलतीं, प्रत्युत् कष्ट-सहन के मूल्य में खरीदनी पड़ती हैं। कष्ट-सहन मनुष्यों का कानून है; और शस्त्र-युद्ध जंगल का। किन्तु जंगल के कानून की अपेक्षा कष्ट-सहन में विरोधी का हृदय-परिवर्तन करने और और उसके कान जो दूसरी तरह बुद्धि की आवाज़ के खिलाफ बन्द रहते हैं उन्हें खोलने की अनन्त गुनी शक्ति रहती है। मैंने जितनी प्रार्थनायें की हैं और निराशा के होते हुए भी जितनी आशा मैंने रखी है, उतनी किसी ने न रखी होगी; और मैं इस निश्चित परिणाम पर पहुँचा हूँ कि हमें यदि कुछ वास्तविक काम करवाना हो तो केवल बुद्धि को सन्तुष्ट करना ही काफी नहीं, हृदय को भी हिलाना चाहिए। बुद्धि की अपील मस्तिष्क को अधिक स्पर्श करती है, किन्तु हृदय को स्पर्श करने के लिए तो सहनशक्ति की ही आवश्यकता है। यह मनुष्य के अन्तर के द्वार खोलती है। मानव-जाति की विरासत तलवार नहीं, कष्ट-सहन है।”

मेडम मोएटेसोरी के साथ गांधीजी की मेट एक आत्मा के साथ आत्मा का सम्मिलन था। मेडम मोएटेसोरी पर गांधीजी का इतना गहरा मोएटेसोरी प्रभाव पड़ा था, कि उन्होंने लिखा—“गांधीजी मुझे दो

मनुष्य की अपेक्षा आत्मा-रूप अधिक प्रतीत होते हैं। वषों से मैं उनका विचार कर रही थी। मैंने अपनी आत्मा से उन्हें समझने का प्रयत्न किया है। उनकी विनम्रता, उनकी मधुरता ऐसी है, मानों समस्त संसार में कठोरता नाम की कोई वस्तु है ही नहीं। उन्होंने तीक्ष्ण सूर्य-किरण की तरह अपने विचारों को सम्पूर्ण रूप से व्यक्त किया, मानों बीच में कोई मर्यादा या बाधा है ही नहीं। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि मैं जिन शिक्षकों को तैयार कर रही हूँ, वह माननीय व्यक्ति उन्हें बहुत सहायता पहुँचा सकेंगे। शिक्षकों को खुले हृदय के और उदार होना चाहिए; उन्हें अपनी आत्मा का परिवर्तन करना चाहिए, जिससे कि बालिका पुत्रों के कठोर और मनुष्य-जीवन को कुचल डालने विघ्नों से पूर्ण संसार से बाहर निकल आ सकें। शिक्षकों के साथ यह मुलाकात मानवी बालकों का आध्यात्मिक रक्षण करने में सहायक हो।” हमें बैठने के लिए गद्दी-तकिये दिये गये थे ।

लिंगन के गरीब किन्तु देव बालकों की तरह स्वच्छ और मधुर बालकों ने हिन्दुस्तानी तरीके से गाँधीजी को नमस्कार किया। ये सादी पोशाक पहने हुए थे और नंगे-पाँव थे। नमस्कार के बाद इन बालकों ने जो काम नीले थे, उन्हें दिखाकर हमारा मनोरंजन किया। तालबद्ध हलन-चलन, ध्यान और इच्छा-शक्ति के अनेक प्रयोग, बजाने के बाजे और अन्त में मौन-स्थापन के महत्त्वपूर्ण प्रयोग कर दिखाये। उपस्थित सब लोगों पर इसका गहरा असर हुआ। अपने बालकों से घिरी मेडम मोएटेसोरी में मुझे बालकों के लिए मुक्त हुए संसार के दर्शन हुए। ईश्वर की सृष्टि में अकेले बालक ही अधिकतर उसके अनुरूप होते हैं। मेडम मोएटेसोरी की शिक्षण-विषयक महत्वाकांक्षा पूरी-पूरी सफल न हो तो भी उन्होंने बालकों में जो पूजने योग्य है, उसकी ओर माता-पिताओं का ध्यान आकर्षित करके मानव-जाति की असाधारण सेवा की है। उन्होंने मधुर संगीतमय इटालियन भाषा में गाँधीजी का स्वागत किया और उनके मन्त्री ने अंग्रेजी में उसका अनुवाद किया। यह अनुवाद भी पूर्ण रूप से हार्मोल्दादक था—

“मैं अपने विद्यार्थियों और वहाँ एकत्र मित्रों को सम्बोधित कर कहती हूँ कि मुझे आपसे एक अत्यन्त महत्व की बात कहनी है। गाँधीजी की आत्मा—जिस महान् आत्मा का हमें इतना अनुभव है वह—उनके शरीर में मूर्तरूप से आज हमारे सामने यहाँ मौजूद है। जिस वाणी के चुनने का सौभाग्य अभी हमें मिलने वाला है, वह वाणी आज संसार में सर्वत्र गूँज रही है। वह प्रेम से बोलते हैं, और केवल वाणी से ही उसे व्यक्त नहीं करते, प्रत्युत् उसमें अपना समस्त जीवन भर देते हैं।

यह ऐसी बात है, जो कभी-कभी ही हो सकती है; और इसलिए जब कभी यह होता है तब प्रत्येक मनुष्य उसे सुनता है ।

“भद्रेय महानुभाव ! मुझे इस बात का गर्व है कि जिस वाणी में आज यहाँ आपका स्वागत हो रहा है, वह लेटिन जातियों में से एक की है--पश्चिम के धार्मिक विचारों के उद्गमस्थान रोम, भव्य रोम की है । मैं चाहती हूँ कि यदि आज पूर्व के सम्मान में पश्चिम के समस्त विचारों और जीवन को मैं मूर्तरूप से यहाँ व्यक्त कर सकी होती तो कितना अच्छा होता ! मैं आपके सामने अपने विद्यार्थियों को पेश करती हूँ । यहाँ उपस्थित केवल मेरे विद्यार्थी ही नहीं हैं; बरन् उनमें मेरे मित्र, मित्रों के मित्र और उनके सगे-सम्बन्धी भी हैं । किन्तु मेरे विद्यार्थियों में अनेकानेक राष्ट्रों के लोग हैं । यहाँ एकत्र हुए लोगों में उदार-हृदय अंग्रेज शिक्षक हैं और अनेक भारतीय विद्यार्थी हैं; इटालियन, डच, जर्मन, डेन्स, जेकोस्लोवेकियन, स्वीड्स, आस्ट्रीयन, हंगेरियन, अमेरिकन और आस्ट्रेलियन विद्यार्थी हैं और न्यूजीलैंड, दक्षिण अफ्रिका, कनाडा तथा आयरलैंड से आये हुए विद्यार्थी भी हैं । बालकों के प्रति प्रेम के ही कारण वे सब यहाँ आये हैं ।

“हे महानुभाव ! संसार की सभ्यता और बालकों के विचार की शृङ्खला से ही हम एक-दूसरे से आपस में जुड़े हुए हैं और इसी कारण हम सब आज आपके समक्ष आये हैं । क्योंकि हम बालकों को जीवित रहना सिखाते हैं--वह आध्यात्मिक-जीवन कि केवल जिसके आधार पर ही संसार की शान्ति स्थापित हो सकती है । और यही कारण है कि हम सब यहाँ जीवन की कला के आचार्य और हमारे सबके--विद्यार्थियों

और उनके मित्रों के—युग की वाणी सुनने के लिए एकत्र हुए हैं। आज का दिन हमारे जीवन में निरन्तरशील होगा। ये २४ छोटे अंग्रेज बालक, जिन्होंने स्वयं तैयारी कर आपके सामने काम दिखाया, भविष्य में जो नया बालक होने वाला है, उसके जीते-जागते चिह्न हैं। हम सब आपके शब्द की प्रतीक्षा कर रहे हैं।”

गांधीजी की हृदयन्त्री के सभी तारों को हिला देने में इसका बड़ा अंतर हुआ और इस हृत्कम्पन में से इस महान् अवसर के योग्य संगीत निकला, जो संसार के सब भागों के निवासी माता-पिता और बालकों के लिए एक सन्देश भी था और मुक्तिपत्र भी। मैं उसे यहाँ पूरा-पूरा देता हूँ—

“नेडन ! आपने मुझे अपने शब्द-भार से दया दिया है। मुझे अत्यन्त नम्रतापूर्वक यह स्वीकार करना ही चाहिए कि आपका यह कहना सर्वथा सत्य है कि कितना ही कम माता-पिता की जिम्मेदारी क्यों न हो, किन्तु मैं अपने जीवन के प्रत्येक अंग में प्रेम प्रकट करने का प्रयत्न करता हूँ। अपने स्वप्न का, जो मेरी दृष्टि में सत्य-रूप है, मात्सृत्कार करने के लिए अधीर हूँ और अपने जीवन के आरम्भ में ही मैंने यह शोध की कि यदि मुझे सत्य का मात्सृत्कार करना हो, तो मुझे अपने जीवन तक को खतरे में डालकर प्रेम-धर्म का पालन करना चाहिए; और ईश्वर ने मुझे बालक दिये हैं, इससे मैं यह शोध भी कर सका कि प्रेम-धर्म तो बालक ही सबसे अधिक समझ सकते हैं और उनके द्वारा ही वह अधिक अच्छी तरह सीखा जा सकता है। यदि उनके बेचारे माता-पिता अज्ञान न होते तो बालक

सम्पूर्ण निदोष रहते । मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि जन्म से ही बालक बुरा नहीं होता । यह जानी-बूझी बात है कि बालक के जन्म के पहले और उसके बाद उसके विकास में यदि माता-पिता अच्छी तरह आचरण करेंगे, तो स्वभाव से ही बालक सत्य और प्रेम का पालन करेंगे; और अपने जीवन के अरम्भ-काल में ही, जबसे मुझे यह बात मालूम हुई तभी से, मैंने उनमें धीरे-धीरे किन्तु सुस्पष्ट हेरफेर करना शुरू कर दिया ।

“मेरा जीवन कितने और कैसे-कैसे तूफानों में होकर गुजरा है, मैं यहां उसकी चर्चा नहीं करना चाहता । किन्तु मैं सचमुच पूरी-पूरी नम्रता से इस बात का साक्षी हो सकता हूँ कि जितने अंश में मैंने विचार, वाणी और कार्य में प्रेम प्रकट किया, उतने ही अंशों में मैंने ‘न समझी जा सकने जैसी’ शान्ति अनुभव की है । मुझमें यह ईर्ष्या-योग्य शान्ति देखकर मेरे मित्र उसे समझ न सके और उन्होंने मुझसे इस अमूल्य धन का कारण जानने के लिए प्रश्न किये हैं । मैं इस सम्बन्ध में उन्हें केवल इससे अधिक कुछ नहीं बता सका कि यदि मित्रों को मुझमें इतनी शान्ति दिखाई देती है, उसका कारण अपने जीवन के सबसे महान् नियम का पालन करने का मेरा प्रयत्न है ।

“जब सन् १८१५ में मैं भारत पहुँचा, तब सबसे पहले मुझे आपके कार्यों का पता चला । अमरेली में मैंने मोएटेसोरी-प्रणाली पर चलने वाली एक छोटी पाठशाला देखी । उसके पहले मैं आपका नाम सुन चुका था । मुझे यह जानने में ज़रा भी कठिनाई न हुई कि यह पाठशाला आपकी शिक्षण-पद्धति के सिर्फ ढाँचे का ही अनुसरण करती थी, तत्त्व का नहीं । और यद्यपि वहां थोड़ा-बहुत प्रामाणिक प्रयत्न भी किया

जाता था, किन्तु साथ ही मैंने यह भी देखा कि वहाँ अधिकांश में दिखावट ही अधिक थी।

“इसके बाद तो मैं ऐसी अनेक पाठशालाओं के सम्पर्क में आया और जितने अधिक सम्पर्क में आया उतना ही अधिक यह समझने लगा कि बालकों को यदि प्रकृति के, पशुओं के शिक्षक का स्वभाव योग्य नियमों द्वारा नहीं प्रत्युत् मनुष्य के गौरव-रूप नियमों द्वारा शिक्षा दी जाय तो उसका आधार भव्य और सुन्दर है। बालकों को जिस प्रकार शिक्षा दी जाती थी, उससे मुझे स्वभावतः ही ऐसा प्रतीत हुआ कि यद्यपि उन्हें अच्छी तरह शिक्षा नहीं दी जाती थी, फिर भी उसकी मूल पद्धतितो इन मूल नियमों के अनुसार ही निर्धारित की गई थी। इसके बाद तो मुझे आपके अनेक शिष्यों से मिलने का सुअवसर प्राप्त हुआ। उनमें से एक ने तो इटली की यात्रा को जाकर स्वयं आपका आशीर्वाद भी प्राप्त किया था। मैं यहाँ इन बालकों और आप सबसे मिलने की आशा रखता था और इन बालकों को देखकर मुझे अत्यन्त आनन्द हुआ है। इन बालकों के सम्बन्ध में मैंने कुछ जानने का प्रयत्न किया है। यहाँ मैंने जो-कुछ देखा है, उसकी एक कलक दरमिधम में भी दिखाई दी थी। वहाँ एक पाठशाला है। इस शाला में और उसमें भेद है। किन्तु वहाँ भी मानवता को प्रकाश में लाने का प्रयत्न होता दिखाई देता है। यहाँ भी मैं वही देखता हूँ कि छुटपन से ही बालकों को मौन का गुण समझाया जाता है। और अपने शिक्षक के संकेत-भात्र से, मुई गिरे तो उस तक की आवाज़ सुनाई दे जाय, इतनी शान्ति से किस तरह एक-के-पीछे-एक बालक आया, य”

देखकर मुझे अनिर्वचनीय आनन्द होता है। तालवद्ध हलन-चलन के प्रयोग देखकर मुझे बड़ा आनन्द हुआ; और जब मैं इन बालकों के प्रयोगों को देख रहा था, मेरा हृदय भारत के गाँवों के अधभूखे बालकों के प्रति दौड़ गया। मैंने अपने दिल में कहा, 'यह पाठ मैं उन्हें सिखाऊँ, जिस रीति से इन्हें शिक्षा दी जाती है उस रीति से मैं उन्हें शिक्षा दे सकूँ, क्या यह सम्भव होगा?' भारत के शरीर से-शरीर बालकों में हम एक प्रयोग कर रहे हैं। यह कहाँ तक सफल होगा, मैं नहीं जानता। भारत के कोपड़ों में रहनेवाले बालकों को सच्ची और शक्तिशाली शिक्षा देने का प्रश्न हमारे सामने है और हमारे पास कोई साधन नहीं है।

“हमें तो शिक्षकों की स्वेच्छापूर्वक दी गई मदद पर आधार रखना पड़ता है। और जब मैं शिक्षकों को ढूँढ़ता हूँ, तो बहुत-थोड़े मिलते हैं—

शिक्षक के रूप में बालक

खासकर जो बालकों के मानस को समझें,

उनमें जो विशेषता हो उसका अभ्यास करें

और उन्हें फिर उनके आत्मसम्मान के भरोसे मानों छोड़ देते हों, इस प्रकार उन्हें अपने ही शक्ति-साधनों पर निर्भर बना दें और उनमें जो उत्तम शक्ति हो उसे प्रकट करें। सैकड़ों, हजारों बालकों के अनुभव पर से मैं कहता हूँ; और आप विश्वास करें कि बालकों में हमारे से भी अधिक सम्मान का खयाल होता है। यदि हम नम्र बनें तो जीवन का सबसे बड़ा पाठ बड़े विद्वानों के पास से नहीं, परन्तु बालकों से सीखेंगे। ईसा ने जब कहा कि बालकों के मुख से बुद्धिपूर्ण बातें निकलती हैं, तो इसमें उन्होंने उच्चतम और भव्य सत्य को प्रकट किया था। मेरा उसमें सम्पूर्ण विश्वास है और मैंने अपने अनुभव में यह देखा है कि यदि बालकों के

जब हम नवजातपूर्णक और निर्दोष होकर जायेंगे तो उनसे जरूरी बुद्धि-मानी की शिक्षा पायेंगे ।

“उम्मे शय आपका और समय नहीं लेना चाहिए । अभी जिस प्रश्न का विचार मेरे मन में है वह जिन करोड़ों बालकों के बारे में मैंने आपसे दिक किया है, उनमें उनके उत्तम गुणों के प्रकट करने का प्रश्न है । परन्तु मैंने एक पाठ सीखा है । मनुष्य के लिए जो बात असम्भव है वह ईश्वर के लिए तो बच्चों का खेल मान है; और उसकी वृष्टि के प्रत्येक झरु के भाग्य-विधाता परमेश्वर में यदि हमारी श्रद्धा हो तो प्रत्येक बात सम्भव हो सकती है । इसी अनिश्चित आशा के कारण मैं अपना जीवन बिता रहा हूँ, और उसकी इच्छा के अधीन होने का प्रयत्न करता हूँ । इसलिए मैं फिर यह कहता हूँ कि जिस प्रकार आप बालकों के प्रेम से अपनी अनेकों संस्थाओं के द्वारा बालकों को श्रेष्ठ बनाने के लिए शिक्षा देने का प्रयत्न करती हैं उसी प्रकार मैं भी यह आशा करता हूँ कि धनवान और साधन-सम्पन्न लोगों को ही नहीं परन्तु शरीरों के बालकों को भी इस प्रकार की शिक्षा देना सम्भव होगा । आपने जो कहा तो बिल्कुल सच है कि यदि हमें संसार में सच्ची शान्ति स्थापित करना है, युद्ध के साथ सच्चा युद्ध करना है, तो हमें उसका बालकों से ही आरम्भ करना होगा । यदि वे स्वाभाविक और निर्दोष रूप से वृद्धि पावें तो हमें न लड़ना होगा, न प्रज्वल प्रस्ताव करने होंगे, परन्तु जाने-अनजाने संसार को जिन शान्ति और प्रेम की भूल है वह प्रेम और शान्ति दुनिर्वा के कोने-कोने में जदतक फैल न जाय तदतक हम नेत्र से प्रेम और शान्ति से शान्ति प्राप्त करते जायेंगे ।”

सस्ता साहित्य मण्डल

‘सर्वोदय साहित्य माला’ के प्रकाशन

१-दिव्य-जीवन	I=)	२१-व्यावहारिक सभ्यता	II)
२-जीवन-साहित्य	१I)	२२-अंधेरे में उजाला	II)
३-तामिल वेद	III)	२३-(अप्राप्य)	
४-व्यसन और व्यभिचार	III=)	२४-(अप्राप्य)	
५-(अप्राप्य)		२५-स्त्री और पुरुष	II)
६-भारत के स्त्री-रत्न (३ भाग) ३)		२६-घरों की सफाई	I=)
७-अनोखा (विक्टर ह्यूगो) १I=)		२७-क्या करें ?	१II)
८-ब्रह्मचर्य-विज्ञान	III=)	२८-(अप्राप्य)	
९-यूरोप का इतिहास	२)	२९-आत्मोपदेश	I)
१०-समाज-विज्ञान	१II)	३०-(अप्राप्य)	
११-खदर का सम्पत्तिशास्त्र	III=)	३१-जब अंग्रेज नहीं आए थे I)	
१२-गोरों का प्रभुत्व	III=)	३२-(अप्राप्य)	II=)
१३-(अप्राप्य)		३३-श्रीरामचरित्र	१I)
१४-३० अ० का सत्याग्रह	१I)	३४-आश्रम-हरिणी	I)
१५-(अप्राप्य)		३५-हिन्दी-मराठी-कोष	२)
१६-अनीति की राह पर	II=)	३६-स्वाधीनता के सिद्धान्त	II)
१७-सीता की अग्नि-परीक्षा I=)		३७-महान् मानवत्व की ओर	III=)
१८-कन्याशिक्षा	I)	३८-शिवाजी की योग्यता	I=)
१९-कर्मयोग	I=)	३९-तरंगित हृदय	II)
२०-कलवार की करतूत	=)	४०-नरमेघ	१II)

४१-सुखी दुनिया	I=)	६३-ब्रह्मचर्य	II)
४२-हिन्दा लाल	II)	६४-नर्मपं या सद्योग ?	१II)
४३-आत्म-कथा (गांधीजी)	१III)	६५-गांधी-विचार-दोहन	III)
४४-(अप्राप्य)		६६-(अप्राप्य)	
४५-जीवन-विकास	१I), १II)	६७-हमारे राष्ट्र-निर्माता	२II)
४६-(अप्राप्य)		६८-स्वतंत्रता की ओर—	१II)
४७-सौती !	I=)	६९-आगे बढ़ो !	II)
४८-अनालक्ष्ययोग-गीताबोध (लोक-सहित)	I=)	७०-बुद्ध-वाणी	II=)
४९-(अप्राप्य)		७१-कांग्रेस का इतिहास	२II)
५०-मराठों का उत्थान-पतन	२II)	७२-हमारे राष्ट्रपति	१)
५१-भाई के पत्र	१)	७३-मेरी कहानी (ज० नेहरू)	२II)
५२-स्वगत	I=)	७४-विश्व-इतिहास की भलक (ज० नेहरू)	II)
५३-(अप्राप्य)	१=)	७५-हमारे किसानों का सवाल	I)
५४-श्री-समस्या	१III)	७६-नया शासन विधान-१	III)
५५-विदेशी कपड़े का मुकाबिला	II=)	७७-(१) गाँवों की कहानी	II)
५६-चित्रपट	I=)	७८-(२) महाभारत के पात्र—	१II)
५७-(अप्राप्य)		७९-सुधार और संगठन	१)
५८-(अप्राप्य)		८०-(३) संतवाणी	II)
५९-रोटी का सवाल	१)	८१-विनाश या इलाज	III)
६०-दैवी सम्पद्	I=)	८२-(४) अँग्रेजी राज्य में हमारी आर्थिक दशा	II)
६१-जीवन-सूत्र	III)	८३-(५) लोक-जीवन	II)
६२-हमारा कलंक	II=)		

सभ्यता-साहित्य संग्रह

‘नवजीवन भाषा’ की पुस्तकें ।

१. गीतगोव—महात्मा गाँधी कृत गीता का सरल भाष्य —)।
२. महान भाष्य—महात्मा गाँधी के लेख में लिखे गये, अदिमा, महावर्ष आदि पर प्रवचन —)।
३. अनामकेतोप—महात्मा गाँधी कृत गीता की टीका— (इलोक सहित :-) गजिन्द ।)
४. मनोदय—रश्किन के Unto this Last का गाँधी जी द्वारा किया गया स्वान्तर— -)
५. नवयुवकी ये दो बातें—प्रिंस क्रोपाटकिन के ‘A word to young-men’ का अनुवाद— -)
६. हिन्द-स्वराज्य—महात्माजी की भाष्य की मौजूदा समस्या पर लिखी प्राचीन पुस्तक जो आज भी नाची है— =)
७. स्तूतदात की भाषा—खानदान सम्बन्धी नियमों तथा व्यवहार के बारे में श्री आनन्द कौमल्यायन की लिखी दिलचस्प पुस्तक— -)
८. किसानों का सवाल—ले० डा० अहमद की इस छोटी-सी पुस्तिका में भारत के इन गरीब प्रतिनिधियों के सवाल पर बड़ी सुन्दरता से विचार किया गया है । हर एक भारतीय को इसको समझना और पढ़ना चाहिए । =)
९. ग्राम-सेवा और गाँधीजी—आजकल जिधर देखो उधर ग्राम-सेवा की ही चर्चा सुनाई देती है—पर वह ग्राम-सेवा किस प्रकार हो—इस पर गाँधीजी ने इसमें विषय प्रकाश डाला है— -)
१०. खादी और गादी की लड़ाई—ले० आचार्य विनोबा (छप रही है) =)

